समाज की पुकार

[नाटक]

लेखक—

श्री रघुवीरस्वरूप भटनागर

गोविन्द पब्लिशिङ्ग हाउस,

जयपुर सिटी ।

प्रकाशक—
कन्हैयालाल कृष्णाजीवन भार्गव,
प्रोप्राइटर्स—
गोविन्द पब्लिशिङ्ग हाऊस, जयपुर

प्रथम संस्कर अप्रेल १६३७

मूल्य एक प्रति का
अजिल्द १)
सजिल्द १।)

मुद्रक—
बा० प्रभुदयाल मीतल,
अग्रवाल इलैक्ट्रिक प्रेस,
मथुरा।

प्रकाशक की ओर से—

आख़िर पुस्तक के आरम्भ में अपनी ओर से कुछ सफ़ाई पेश करने को मैं वाध्य हुआ हूँ। तमन्ना थी—'समाज की पुकार' ख़ूब छपे, सुन्दर छपे, शुद्ध छपे, इसका गेट-अप अपने ढङ्ग का निराला, एक ही हो। पर वह हौसला कहाँ पूरा हो सका? इसके अन्दर जो कुछ भूलें रह गई हैं, वे अक्षम्य मालूम होती हैं। इसका कारण क्या बतलाऊँ? पुस्तक मथुरा में छपी और मै बराबर जयपुर में रहा। प्रूफ की इन ग़लतियों के लिये माफ़ी माँगते हुये मुझे भय मालूम होता है। हमारे उदार पाठक अगर क्षमा प्रदान करें, तो उनकी बड़ी सहृदयता होगी।

मैं श्री० जगदीशनारायण, युगान्तर प्रकाशन समिति पटना, के प्रति चिर-कृतज्ञ हूँ, जिनके उत्साहित करने पर मैंने पुस्तकों के प्रकाशन का काम शुरू किया है तथा श्रीप्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, मथुरा के प्रति भी मैं चिर-कृतज्ञ हूँ, जिनकी अनमोल कृपाओं के फलस्वरूप यह पुस्तक शीघ्र छप कर तैयार हो सकी है।

"मैं इस पुस्तक के लेखक श्री रघुवीरस्वरूपजी के प्रति भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने कॉलेज से समय निकाल कर प्रूफ़ देखने का कष्ट किया, तथा समय समय पर उचित परामर्श देते रहे।"

कृष्णजीवन भार्गव.

मानव तू मानव से कब सीखेगा, करना सच्चा प्रेम ?
कब जगती के वक्षस्थल पर सब जीवित होंगे सक्षेम ?

पं० रामकृष्ण शुक्ल "शिलीमुख" एम० ए०

प्रोफेसर-महाराजाज कॉलेज, जयपुर के दो शब्द—

श्री रघुवीरस्वरूप भटनागर की प्रथम रचना 'समाज की पुकार' को अच्छी तरह पढ़ा है। इस पुस्तक को पढ़ने मे मेरी रुचि का आग्रह होना स्वाभाविक बात थी। रघुवीरस्वरूप जी हमारे यहाँ के होनहार विद्यार्थी हैं, और उनकी रचना को देखने से पहले ही मैंने हिन्दी के सम्बन्ध में उनसे कुछ आशाएँ बनाली थीं।

'समाज की पुकार' को देख कर उन आशाओं का पुष्टीकरण हुआ है। सम्मति समालोचना नहीं होती; अत पुस्तक के गुण, दोषो के विवेचन का यह स्थल नही है। किसी पुस्तक में गुण और दोष दोनो ही हो सकते है और दोनो ही बाते किसी भी पहिली रचना मे अपरिचित रूप से उपस्थित हो सकती है, जिससे लेखक की प्ररूढ़ कलात्मकता या अकलात्मकता का एकदम अनुमान कर लेना संशय से मुक्त नहीं होता। लेखक की वास्तविक शक्तियों का परिचय उसकी एक दो पुस्तकें निकल जाने पर ही किया जा सकता है।

परन्तु फिर भी अपनी पहली ही कृति मे लेखक जब प्रोत्साहना पाने का अधिकारी बनता है,तो अपने संस्कारों या Potentialities को सूचना द्वारा मेरे इस विश्वास में निश्चय की कमी नहीं है कि रघुवीर-स्वरूप जी की प्रथम रचना में वैसी सूचनाएँ प्रचुर हैं। यदि उन्हे हिन्दी संसार से यथेष्ट प्रोत्साहन मिला और यदि उन्होंने अपने साहित्यिक उद्योग को शिथिल न होने दिया, तो वे अवश्य किसी समय हिन्दी के एक अच्छे नाटककार हो जायेंगे। 'समाज की पुकार' स्वयं काफी अच्छी है, हिन्दी में प्रकाशित अनेक नाटकों से बहुत अच्छी है, और मुझे आशा है, कि उनका दूसरा नाटक इससे भी अधिक अच्छा होगा।

जयपुर
ता० २८-३-३७

रामकृष्ण शुक्ल
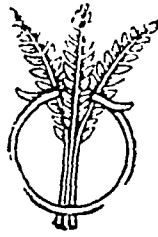
दो शब्द

Man's work is his soul. *Ibsen.*

उपरोक्त शीर्षक की आढ़ मे कुछ और लिखूं, इसका निर्णय मै अभी तक नही कर पाया हूं। यह नाटिका क्यो लिखी गई? क्या इसकी आवश्यकता थी? यदि हाँ, तो क्या उसकी न्यूनाधिक पूर्ति हुई? यह कुछ ऐसे प्रश्न है, जिनका कोई निश्चयात्मक उत्तर नही दिया जा सकता और वह भी लेखक द्वारा।

साहित्य राष्ट्र की सम्पत्ति है। समाज की विचार-धारा को अच्छे बुरे मार्ग पर ले जाना, बहुत कुछ साहित्य और साहित्य-कारो पर निर्भर है। साहित्य-सेवा प्रत्येक योग्य व्यक्ति का कर्त्तव्य हो सकता है, परन्तु प्रगति विरोधी साहित्य का निर्माण अवांछनीय है, वास्तविकता इससे भिन्न है। अच्छा और बुरा साहित्य लिखा गया है, लिखा जायगा, परन्तु यह किससे छिपा है कि बुरे के नष्ट हो जाने पर अच्छा रह जाता है, फिर भी दोनो का प्रभाव तो समाज पर पडता ही है। जन्म-सिद्ध भाव-स्वातन्त्र्य के आधार पर हम किसी को लिखने से नहीं रोक सकते। इसी आधार पर इस नाटिका का लिखा जाना, चाहे अच्छी हो या 'बुरी न्यायसङ्गत ठहराया जा सकता है। हाँ, मै अपने लिये कह सकता हूँ-भले ही इसे कोई भ्रम-वश आत्म-प्रशंसा ही क्यो न समझ ले कि यदि मैने इस नाटिका को प्रगति-विरोधी अथवा सर्वथा अर्थहीन समझा होता,

तो इसे प्रकाश मे आने देने की अपेक्षा नष्ट हो जाने देना कही अधिक श्रेयस्कर समझता।

विशुद्ध साहित्यिक भावना से प्रेरित होकर यह नाटिका लिखी गई या नही, यह भी कहने मे मै असमर्थ हूँ, क्योकि विशुद्ध साहित्यिक भावना की परिभाषा मै ठीक-ठीक समझता नही। वैसे यह नाटिका, रजिष्ट्रार आगरा यूनिवर्सिटी की उस विज्ञप्ति के उत्तर मे लिखी गई थी, जिसमे किसी भी भारतीय भाषा मे किसी भारतीय यूनिवर्सिटी के विद्यार्थी से बाल विवाह पर Village welfare League, London की प्रतियोगिता के लिये एक घण्टे मे अभिनय की जाने योग्य सरल भाषा मे एक मनोरञ्जक नाटिका मॉगी थी। इनके अतिरिक्त कुछ बन्धन मैने अपनी ओर से बना लिये और इस प्रकार वस्तु और पात्र के आकार मे इतनी विषमता हो गई कि दोनो को बिना तोड़े काम चलना कठिन हो गया। मनोरञ्जन के लिये मनछुरी और तिगड़म को साथ लेना पड़ा और सफल अभिनय की चिन्ता ने सङ्गीत की अपरिचित क्यारियो को रौंदने पर विवश कर दिया।

मैने क्या लिखा यह तो प्रगट है, परन्तु मै क्या लिखना चाहता था, यह जब तक मै स्वयं न कहूँ, तब तक क्या मालूम हो सकता है। चाहता तो यह था कि शब्दो की सहायता से पात्रो का ऐसा चित्र खिच सके कि पाठको के सम्मुख उनका आंतरिक और बाह्य रूप स्पष्ट हो जावे, साथ ही वे धड़कन से भी सर्वथा खाली न हो। बाल विवाह के अतिरिक्त दुःख, सुख, कर्त्तव्य तथा धार्मिक कटुता आदि समस्याओ पर भी प्रकाश

डालना चाहता था। कैसा दु:साध्य स्वप्न था और कहाँ मेरी परिमित शक्तियाँ ! परन्तु स्वप्न कौन नही देखता ?

कला और मौलिकता के जमाने में मै इनका दावा नहीं करता। लिपि नागरी है, शब्द हिन्दी-उर्दू के यानी 'हिन्दुस्तानी' है, उन्हे उठा कर जमा भर मैने दिया है। अब रहे भाव, तो उनमे मुझे अपने पराये पहचानना कठिन है। कला, आदर्श और मौलिकता को निकाल कर साहित्य मे क्या रह जाता है, इससे भी मै अनभिज्ञ हूँ, क्योकि कला और मौलिकता को मै निजी मत के रङ्गीन चश्मे के बिना नही देख सकता।

नाटक वास्तविकता का काल्पनिक चित्र है और इस कारण उस काल्पनिक चित्र मे कभी-कभी हमे हमारा वास्तविक रूप दिखाई दे जावे, तो क्या आश्चर्य है ! एक मित्र ने इसका कुछ अंश सुन कर कहा "यह तो तुम मेरा खाका खीच रहे हो" सम्भव है यही उपालम्भ और भी सुनूँ। यह भ्रम है, मैने किसी का खाका खींचने का प्रयत्न नही किया। "साकार आराधन की सफल साकार मूर्ति" चम्पा और सेवा और प्रेम के फरिश्ते सेवाराम को छोड़ कर सभी चरित्र (Characters) ऐसे है, जैसे यहाँ असंख्य मिलेगे, इसलिये व्यक्ति विशेष का खाका खींचने का प्रश्न ही नही उठता और चम्पा और सेवाराम भी केवल दो नही होगे।

इस नाटिका की बहुतसी त्रुटियो का एकमात्र कारण मेरी अयोग्यता को परिस्थितियो की झीनी चादर मे नहीं छिपाना चाहता, फिर भी मेरा विश्वास है कि वास्तविकता और कल्पना के सागर से लाया हुआ थोडा सा यह खारी जल, उनको जिन्हे

इसकी आवश्यकता है, अवश्य कुछ सेवा कर सकेगा। हाँ, उन्हें सहृदयतापूर्वक इसका खारीपन (त्रुटियाँ) दूर करना होगा। इन त्रुटियो मे से कुछ का ज्ञान मुझे हो चला है और......और बाते उन पर छोड़ता हूँ, जिनके लिये यह लिखी गई है।

"दो शब्द" को समाप्त करने के पहले दो शब्द उन सज्जनो से कहने का साहस करता हूँ, जो नये लेखक को प्रोत्साहन देने के ठेकेदार बन कर उसकी तावड़तोड़ प्रशंसा कर देते है अथवा उसे बिगड़ने देने से रोकने के लिये उसकी उचित सराहना भी करते हुए हिचकिचाते है। (उनके विषय मे तो कुछ न कहना ही अच्छा है, जो अपनी अमूल्य सम्मति और परामर्श को अमूल्य समझ कर उससे अलग नही होते। उनका कार्य्य सराहनीय है और खुदा की दी उनकी समझ पर कुछ कहना अनधिकार चेष्टा होगी)। मै अपने लिये कह दूँ कि मैं सब प्रकार की आलोचना और परामर्श का सहर्ष स्वागत करूँगा। कटु आलोचना मुझे विचलित नही कर सकती और उचित सराहना मुझे गर्वित न करेगी। मैं चाहता हूँ, कि यह मेरा प्रथम प्रयत्न—जो अन्तिम कदापि नही है—मेरे मार्ग का प्रथम Milestone हो। उचित परामर्श से मै लाभ उठाने का यथासाध्य प्रयत्न करूँगा।

अब मै उस वस्तु को लुटाना चाहता हूँ, जिसे आजकल सबसे सस्ती कहा जाता है, तात्पर्य धन्यवाद से है। मेरी प्रार्थना है कि वस्तु का विचार न कर दाता की भावना पर विचार करना चाहिये। वे सभी सज्जन, जिन्होने जाने अनजाने इस नाटिका के सम्बन्ध मे सहायता अथवा परामर्श दिया है, वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र है। इस लिस्ट मे

प्रो० रामकृष्ण शुक्ल "शिलीमुख" एम० ए० का नाम प्रमुख है, जिन्होंने सारी पुस्तक पढ़ कर अपनी शुभ सम्मति तथा परामर्श दिया। आत्मीयोंके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना पाश्चात्य ढोंग होगा। पं० कृष्णजीवन भार्गव तो इस धन्यवाद की लूट के तभी अधिकारी हो गए थे, जब उन्होंने आजकल के सिरकुचले साहित्यिक वातावरण में भी एक असुपरिचित लेखक की कृति को प्रकाश में लाने का उत्तरदायित्व ले लिया था।

अन्त में, "समाज की पुकार" आज के समाज को सादर समर्पित है। यदि अपने ध्येय में इसे आंशिक सफलता भी मिली, तो लेखक (और प्रकाशक भी) अपने को कृतकृत्य समझेंगे।

जयपुर
होलिका दहन
२६ मार्च, ३७

रघुवीरस्वरूप भटनागर,

इसकी आवश्यकता है, अवश्य कुछ सेवा कर सकेगा। हाँ, उन्हें सहृदयतापूर्वक इसका खारीपन (त्रुटियाँ) दूर करना होगा। इन त्रुटियो मे से कुछ का ज्ञान मुझे हो चला है और..... और बाते उन पर छोड़ता हूँ, जिनके लिये यह लिखी गई है।

"दो शब्द" को समाप्त करने के पहले दो शब्द उन सज्जनो से कहने का साहस करता हूँ, जो नये लेखक को प्रोत्साहन देने के ठेकेदार बन कर उसकी ताबड़तोड़ प्रशंसा कर देते है अथवा उसे बिगड़ने देने से रोकने के लिये उसकी उचित सराहना भी करते हुए हिचकिचाते है। (उनके विषय मे तो कुछ न कहना ही अच्छा है, जो अपनी अमूल्य सम्मति और परामर्श को अमूल्य समझ कर उससे अलग नही होते। उनका कार्य्य सराहनीय है और खुदा की दी उनकी समझ पर कुछ कहना अनधिकार चेष्टा होगी)। मै अपने लिये कह दूँ कि मै सब प्रकार की आलोचना और परामर्श का सहर्ष स्वागत करूँगा। कटु आलोचना मुझे विचलित नही कर सकती और उचित सराहना मुझे गर्वित न करेगी। मै चाहता हूँ, कि यह मेरा प्रथम प्रयत्न—जो अन्तिम कदापि नही है—मेरे मार्ग का प्रथम Milestone हो। उचित परामर्श से मै लाभ उठाने का यथासाध्य प्रयत्न करूँगा।

अब मै उस वस्तु को लुटाना चाहता हूँ, जिसे आजकल सबसे सस्ती कहा जाता है, तात्पर्य धन्यवाद से है। मेरी प्रार्थना है कि वस्तु का विचार न कर दाता की भावना पर विचार करना चाहिये। वे सभी सज्जन, जिन्होने जाने अनजाने इस नाटिका के सम्बन्ध मे सहायता अथवा परामर्श दिया है, वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र है। इस लिस्ट मे

प्रो० रामकृष्ण शुक्ल " शिलीमुख " एम० ए० का नाम प्रमुख है, जिन्होने सारी पुस्तक पढ़ कर अपनी शुभ सम्मति तथा परामर्श दिया। आत्मीयोके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना पाश्चात्य ढोंग होगा। पं० कृष्णजीवन भार्गव तो इस धन्यवाद की लूट के तभी अधिकारी हो गए थे, जब उन्होने आजकल के सिरकुचर्ल साहित्यिक वातावरण मे भी एक असुपरिचित लेखक की कृति को प्रकाश मे लाने का उत्तरदायित्व ले लिया था।

अन्त मे, " समाज की पुकार " आज के समाज को सादर समर्पित है। यदि अपने ध्येय मे इसे आंशिक सफलता भी मिली, तो लेखक (और प्रकाशक भी) अपने को कृतकृत्य समझेंगे।

जयपुर
होलिका दहन
२६ मार्च, ३७

रघुवीरस्वरूप भटनागर,

इसकी आवश्यकता है, अवश्य कुछ सेवा कर सकेगा। हाँ, उन्हे सहृदयतापूर्वक इसका खारीपन (त्रुटियाँ) दूर करना होगा। इन त्रुटियो मे से कुछ का ज्ञान मुझे हो चला है और .....और बाते उन पर छोड़ता हूँ, जिनके लिये यह लिखी गई है।'

"दो शब्द" को समाप्त करने के पहले दो शब्द उन सज्जनो से कहने का साहस करता हूँ, जो नये लेखक को प्रोत्साहन देने के ठेकेदार बन कर उसकी तावड़तोड़ प्रशंसा कर देते है अथवा उसे बिगड़ने देने से रोकने के लिये उसकी उचित सराहना भी करते हुए हिचकिचाते है। (उनके विषय मे तो कुछ न कहना ही अच्छा है, जो अपनी अमूल्य सम्मति और परामर्श को अमूल्य समझ कर उससे अलग नही होते। उनका कार्य्य सराहनीय है और खुदा की दी उनकी समझ पर कुछ कहना अनधिकार चेष्टा होगी)। मै अपने लिये कह दूँ कि मै सब प्रकार की आलोचना और परामर्श का सहर्ष स्वागत करूँगा। कटु आलोचना मुझे विचलित नही कर सकती और उचित सराहना मुझे गर्वित न करेगी। मै चाहता हूँ, कि यह मेरा प्रथम प्रयत्न—जो अन्तिम कदापि नही है—मेरे मार्ग का प्रथम Milestone हो। उचित परामर्श से मै लाभ उठाने का यथासाध्य प्रयत्न करूँगा।

अब मै उस वस्तु को लुटाना चाहता हूँ, जिसे आजकल सबसे सस्ती कहा जाता है, तात्पर्य धन्यवाद से है। मेरी प्रार्थना है कि वस्तु का विचार न कर दाता की भावना पर विचार करना चाहिये। वे सभी सज्जन, जिन्होने जाने अनजाने इस नाटिका के सम्बन्ध मे सहायता अथवा परामर्श दिया है, वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र है। इस लिस्ट मे

प्रो० रामकृष्ण शुक्ल "शिलीमुख" एम० ए० का नाम प्रमुख है, जिन्होने सारी पुस्तक पढ़ कर अपनी शुभ सम्मति तथा परामर्श दिया। आत्मीयोके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना पाश्चात्य ढोंग होगा। पं० कृष्णजीवन भार्गव तो इस धन्यवाद की लूट के तभी अधिकारी हो गए थे, जब उन्होने आजकल के सिरकुचले साहित्यिक वातावरण मे भी एक असुपरिचित लेखक की कृति को प्रकाश मे लाने का उत्तरदायित्व ले लिया था।

अन्त मे, "समाज की पुकार" आज के समाज को सादर समर्पित है। यदि अपने ध्येय मे इसे आंशिक सफलता भी मिली, तो लेखक (और प्रकाशक भी) अपने को कृतकृत्य समझेगे।

जयपुर
होलिका दहन
२६ मार्च, ३७

— रघुवीरस्वरूप भटनागर,

प्रमुख पात्र

पुरुषपात्र—

तनसुखलाल—दिल्ली का धनिक व्यापारी।

विनयकुमार—तनसुखलाल का बडा लड़का तथा बम्बई का एक प्रख्यात व्यवसायी।

सेवाराम—विनयकुमार का सुधारक मित्र।

फक़ीरचन्द—कानपुर का एक व्यवसायी। प्रेमलता का पिता।

विशम्भर—तनसुखलाल का एक मित्र।

भरोसेलाल— ,, एक मित्र।

मनछुरीदास—(मनहरीदास)। तनसुखलाल का दगाबाज दोस्त।

त्रिविक्रमप्रसाद—(तिगड़मपरशाद) प्रसिद्ध बदमाश। चम्पा के पति का हत्यारा।

प्रफुल्ल—तनसुखलाल का १२ वर्षीय छोटा पुत्र।

बन्ने
मौला } तबलची

अन्य—

नट, डाक्टर, पुलिस वाले, इत्यादि।

स्त्रीपात्र—

तारा—विनयकुमार की पत्नी, तनसुखलाल की पुत्रवधू ।

श्रीदेवी—फक़ीरचन्द की पत्नी ।

चम्पा—तनसुखलाल की अज्ञात पुत्री । नर्तकी ।

चञ्चला—मनछुरीदास की पत्नी ।

प्रेमलता—फक़ीरचन्द और श्रीदेवी की ११ वर्षीय कन्या ।

अन्य—

नटी—सखी, नौकरानी और गाने वालियाँ इत्यादि ।

अंक १

॥ दृश्यावली ॥

दृश्य		स्थान
		मङ्गलाचरण
१	–	नर्तकी की बैठक
२	–	डॉक्टर की डिस्पेन्सरी
३	–	मनछुरीदास का घर
४	–	विनयकुमार का घर
५	–	तनसुखलाल की बैठक
६	–	फ़क़ीरचन्द की बैठक
७	–	विनयकुमार की बैठक
८	–	तनसुखलाल का घर

समाज की पुकार

(नाटक)

अंक १

मंगलाचरण ।

स्थान अज्ञात, समय सन्ध्या

स्टेज—(पर्दा उठता है; नट प्रार्थना करता हुआ दिखाई देता है। कुछ हट कर उसके बाई ओर किसी नौजवान की लाश पड़ी हुई है। कपड़े चीथड़े हो रहे है, परन्तु नट ने उसे अभी नही देखा है, कुछ दूर एक भिखारियों का दल भी दिखाई देता है)

नट (घुटनों के बल बैठा हुआ प्रार्थना कर रहा है)

नट—नागर, जग—स्वामी, लीलापति, भगवान,
समदरशी, दुख—त्राता, भयहारी, रहमान ।
निराकार अल्लाह, और साकार राम,
तुमको हैं, लाखों सलाम, लाखों प्रणाम ॥

(नट बांई ओर को बढ़ता है, तथा लाश को देख कर चौंकता है)

नट—आह, यह दूसरा भयंकर दृश्य है! हमारा सोने का देश, देवताओं के रहने योग्य स्थल पाप और दुराचार की क्रीड़ा-भूमि बन गया है। लोग दाने-दाने को मोहताज हो रहे हैं, बीमारियों ने प्रत्येक घर में घर कर रक्खा है। यह एक नौजवान की लाश पड़ी हुई है, देखूं तो यह कैसे मरा और यह चिट्ठी क्यों पड़ी है? (उठा कर) इसका लिखने वाला तो कोई पढ़ा लिखा व्यक्ति मालूम होता है। देखूं तो सही क्या लिखा है? (ज़ोर से पढ़ता है)

"सबको मालूम हो कि मैं, अपनी इच्छा से, बेकारी के कारण आत्म-हत्या करता हूँ।"

हस्ताक्षर—सुरेश बी० ए०

ओहो! बेकारी के कारण हमारे देश के नवयुवकों की ऐसी शोचनीय स्थिति हो गई है। हे नाथ! क्या दया नहीं करोगे? वह देखो, एक भिखारियों का दल इधर ही आ रहा है।

(गेरुए वस्त्र पहिने एक नौ वर्षीय बालक नट के पास आता है, उसके पीछे ऐसे ही कपड़े पहिने एक स्त्री आती है। दूरी पर कंगालो का एक और दल है)

बालक—"बाबा, कुछ भिक्षा दो। हम दूर देश के संन्यासी हैं और उपदेश देना ही हमारा काम है।"

नट—महाराज, आप तो वामन अवतार प्रतीत होते हैं, परन्तु यह तो कहिये कि आपका नाम क्या है?

(बालक पीछे खड़ी स्त्री की ओर असहाय-सा देखता है)

बालक—मेरा, मे, मे·····मेरा नाम लछमनिया है, एक पैसा·········।

नट—(दर्शकों की ओर मुख करके) हाय, यह हमारे पतन का दूसरा दृश्य है। इतना छल, इतनी प्रवंचना! जहां दिग्गज विद्वान् तथा जग-उपकारी ऋषि होते थे, उनका स्थान अब इन प्रबोध बच्चों ने तथा दुराचारी गुण्डों ने ले लिया है। आज देश का लाखों रुपया, बने हुए गौरक्षकों, हृष्टपुष्ट दुराचारियों, तथा व्यभिचार के अड्डे बने हुए विधवाश्रमों में जा रहा है। हमारे समाज की तो यह स्थिति है, फिर समाज के व्यक्तियों का क्या हाल होगा? बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह तथा अनमेल विवाहों ने हमारी सन्तति को दुर्बल और मूर्ख बना दिया है।

(नट के पीछे क्रमशः इसी प्रकार के स्त्री पुरुष के जोड़े जाते हैं)

(बालक से) ले और अब भाग जा। (सिक्का देता है)

(बालक और स्त्री का प्रस्थान)

नट—(आँखों में आँसू भर कर) अब नहीं देखा जाता, नहीं देख सकता, इस करुण दशा को एक क्षण भी नहीं देख सकता।

(सिर पर हाथ रख कर शव के पास बैठ जाता है)

(नटनी का प्रवेश)

नटी—(आश्चर्यचकित हो) लो, यह मैं क्या देख रही हूँ? यह तो हमेशा ऐसे ही रहते हैं, न खाने की इच्छा न पहिनने का शौक़। संसार आनन्द की रँगरेलियाँ मना रहा है और यह मुर्दे के पास सिर पकड़े बैठे हैं। (प्रकट) नाथ!

प्राणनाथ, आप उदास कैसे बैठे हैं, क्या गन्धर्व लोक के उत्सव में शामिल होने का विचार नहीं है ?

नट—(सिर उठाता है) उत्सव ! तुम्हें उत्सव सूझ रहा है ? मै तो इस भारत-भूमि का उत्सव देख रहा हूँ। यहाँ मृत्यु का ताण्डव हो रहा है, अकाल देखो तबला लिये बैठा है। अनाचार की आधीनता में कष्ट तथा पाप स्वतन्त्रता पूर्वक विचरण कर रहे है। यह क्या उत्सव नहीं है ?

नटी—उस बीते हुए अन्धेरे की ओर क्यों झाँक रहे हो ? प्राणप्रिय ! इस उन्नति के प्रभात को देखो जो अपनी सुखद किरणों से, विश्व को आलोकित करने के मन्सूबे ठान रहा है। उन सदाचारी भारतीय युवकों को देखो जो यद्यपि गिनती में बहुत थोड़े हैं, परन्तु अपने हृदयो में सारे ससार के कल्याण की कामना को छुपाये हुए है। देश अब एक नवीन विचार से भर गया है, सब ओर मंगलगान सुनाई दे रहे हैं। क्या तुम इस परिवर्तन को नहीं देखते ? यह सत्य है कि अब भी पापों का बाहुल्य है, अकाल-मृत्यु का ताण्डव है, बेकार हो भूखो मरने का सौभाग्य भी बहुतो को प्राप्त है, परन्तु इनका अन्त समय अब दूर नहीं। भारतीय नवयुवक अब जाग उठे है।

नट—कानों से तो यह सुन रहा हूँ प्रिये, परन्तु आँखों से तो (लाश की ओर संकेत करके) यही दिखाई दे रहा है।

नटी—हाँ, यह पतित भारत की लाश है, उन्नत भारत और नवीन भारत तो ·····(एक छोटे सुन्दर बालक का प्रवेश) यह है।

[नट-नटी दोनों बालक की ओर मुग्ध दृष्टि से देखते हैं]

बालक—(गाता हुआ दूर को खेलने चला जाता है)

देश हमारा, सुन्दर प्यारा।
भारत, सुन्दर देश हमारा॥

नट—मत भटकाओ, प्रिये, मत भटकाओ। कहीं सब्ज़ बाग़ दिखा कर प्यासा न लौटाना।

नटी—प्राणनाथ! क्या मेरी बात पर विश्वास नहीं है? आज यह देश सी० वी० रमन और टैगोर जैसे विद्वानों पर अभिमान कर सकता है। गाँधी तो मनुष्य जाति का कल्याण करने वाला ईश्वरीय दूत है ही। और यह देखो यह एक नवयुवक विद्यार्थी द्वारा लिखी हुई नाटिका है।

नट—देखूँ, (पुस्तक लेता है) मालूम तो अच्छी होती है। हाँ प्रिये! नाम क्या है इसका-मैं तो बहुत थक गया हूँ।

नटी—इसका नाम "समाज की पुकार" है। यह निस्सन्देह, समाज मे क्रांति करने वाली नाटिका है। यही क्या, प्राणनाथ! आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नवयुवक आगे बढ़ रहे हैं, क्या विज्ञान और क्या कविता, क्या घर और क्या कारागृह, क्या विवाह मण्डप और क्या रण-भूमि, सब ओर नवयुवक प्राणो की बाज़ी लगा चुके है। अब वह दिन दूर नही है कि जब हमारे वर्षों के स्वप्न कार्य्य रूप में परिणित होगे।

(एक अष्टवर्षीय बालिका का प्रवेश)

बालिका—माताजी, मैं भी आगयी। एक सभा में गई थी, जहाँ भारतीय युवक नये-नये आविष्कार दिखा रहे थे।

नटी—हाँ, बेटी, वह सबका स्वामी बहुत दयालु है। आओ, हम सब उसकी प्रार्थना करें।

(क्रमश बालक, नट, नटी और बालिका हाथ जोड़ कर खड़े हो जाते हैं, सब मिल कर गाते हैं)।

* प्रार्थना *

सुन्दर प्रभात आया, जग मुदित मन से धाया,
वन्दन करें तुम्हारा, श्रीकृष्ण नदनंदन ॥
तुम दीन के सहायक, शुभ कार्य्य में विनायक,
हो अग्रसर सदा तुम, खल-दुष्ट-दल विभंजन ॥
हम में सुबुद्धि भरदो, सब कार्य्य पूर्ण करदो;
तुम विश्व के रचयिता, निर्लेप नित निरंजन ॥

नट—धन्य है तुम्हारी कला प्रिये! तुम ने तो मुझे किसी अपूर्व लोक में पहुँचा दिया, चित्त आकुल था वह शान्त हो गया। हाँ, तुमने गन्धर्व-लोक के उत्सव का जिक्र किया था, सो क्या वहाँ चलना है?

नटी—प्राणेश! अब भारत देश भी गन्धर्व-लोक बनने वाला है, शीघ्र ही वहाँ भी सुख, समृद्धि का प्रसार होगा। वहाँ यही नाटिका, जो आपको मैंने अभी दिखाई

थी अभिनीत होगी, चलो, आज वहीं चलें। परन्तु इस मुर्दे को क्या यहीं छोड़ दें?

नट—नहीं, मैं इसका अभी क्रिया-कर्म कराये देता हूँ। तुम्हारे शब्दों में पतित भारत के शव को आज सुधार की इतनी तीक्ष्ण ज्वाला में जला दिया जावेगा कि भविष्य में इसका नाम इस रूप में कभी न लिया जा सकेगा। सेवक गण..... ...।

(प्रवेश—चार सेवक आते हैं)।

जाओ,इस शव को ले जाकर अच्छी तरह से जला दो।

(सेवक शव लेकर चले जाते हैं)।

नट—अब तो तुम्हें सन्तोष हो गया। आज न जाने किसका मुख देखा था, जो सुबह से चिन्ता ने घेर रक्खा है, हाँ, यह तो कहो कि वहाँ तबीअत भी बहल जावेगी कि नहीं?

नटी—मुझे तो आशा है कि आप प्रसन्न होकर लौटेंगे। नाटक का अभिनय सुशिक्षित व्यक्ति कर रहे हैं और उनसे सफलता की आशा है।

नट—और यदि हम आज हमारे दिव्य चक्षुओं का उपयोग करें तो-यह तो और भी अच्छा है।

नटी—जैसी आपकी इच्छा।

(धड़ाके का शब्द होता है, पर्दा उठता है, सब चकित हो उस ओर देखते हैं। नटी और बालिका एक ओर तथा नट और बालक दूसरी ओर धीरे धीरे चले जाते हैं। दृश्य एक नर्तकी का कमरा है)।

दृश्य १ अंक १

स्थान—नर्तकी की बैठक

स्टेज—(फ़र्श पर गादी, मसनद बिछे हुए हैं। चम्पा, नर्तकी भाल पर बिन्दी लगा कर दर्पण में मुख देख रही है। दो व्यक्ति और हैं, दोनो के नौकरों के से कपडे हैं, एक के पास सारंगी तथा दूसरे के पास बेन्जो है। चम्पा सांवली सी, परन्तु आकर्षक मुख वाली लगभग २५ वर्ष की स्त्री है)।

चम्पा—(दर्पण में मुख देखते हुए) बन्ने, तुमने कौन से सेठ का ज़िक्र किया था, मैं हर किसी के लिये शृङ्गार नहीं करूँगी ? और यह भी ख़याल रक्खो कि ऐसे-वैसों को यहाँ न आने दिया करो।

बन्ने—(सारंगी ठीक करता हुआ) बाई जी ! यहाँ तो ऐसे वैसे ही आते हैं, यदि इज्ज़त का ही विचार था,·· ··।

चम्पा--बस अधिक न बको। यह ठीक है कि मैंने लज्जा को तिलाञ्जलि देदी है, पर निर्लज्जों से मुझे घृणा है। यद्यपि मैं नर्तकी हूँ, वेश्या हूँ, परन्तु फिर भी समाज में मेरा भी स्थान है। मैं अपनी इज्ज़त समझती हूँ। (आँसू भर कर) हा राम ! क्या दुनिया यही है ! (दूसरे व्यक्ति से) मौला वे कै बजे आने वाले हैं ?

मौलाः— बेन्जो पर स्वर निकालता हुआ) बाई जी, साढे आठ का टाइम दिया था, टाइम हो चला है।

चम्पा—हाँ, नाम तो बताओ, मैं भूल सी रही हूँ।

बन्ने—उनका नाम तनसुखलाल है, सुना है कि वे दिल्ली के बड़े भारी······।

चम्पा—अँयँ, क्या नाम बताया ?

बन्ने—तनसुखलाल, दिल्ली के बड़े भारी सेठ ·····।

चम्पा—(स्वगत) हे भगवन् ! कहीं ऐसा न हो जाय।

मौला—बाई जी, वे लोग, शायद आही रहे हैं।

चम्पा—अच्छा, अच्छा, मैं भी तैयार हूँ। विपत्तियों का सामना करने के लिये मैं सदा तैयार रही हूँ।

हैं हाथ जोड़ कोई, कहते जगत् पिता से;
"हे नाथ ! दूर करना, विपत्तियाँ हमारी।"
पर मैं यहाँ सदा से, कहती रही अभागी,
"अब नई कौनसी तुम, दोगे विपत्ति मुझ को ?"

मौला-बाईजी, वे सेठ जी भी आगये। लल्लू ओ लल्लू!

(एक ओर से तबला लेकर लल्लू आता है, तथा दूसरी ओर से दो व्यक्ति प्रवेश करते हैं, एक ढलती अवस्था का व्यक्ति है, लगभग ५५ का तथा दूसरा कुछ कम अवस्था का, पहिला बहुत बढ़िया कपड़े पहिने है, सिर पर मारवाड़ी पगड़ी, गले में हीरों का हार। दूसरा चूड़ीदार पाजामा और गोल टोपी। इनके आते ही लल्लू, मौला अदब से सलाम करते हैं)

चम्पा—(स्वतः) हाय, वही हुआ, परन्तु मुझे धैर्य्य से काम लेना चाहिए। (प्रकट) आज मैं बड़ी खुशनसीब हूँ, कि मुझ ग़रीब को आपकी क़दमबोसी का सौभाग्य हासिल हुआ।

पहिला व्यक्ति—(दूसरे से) मनछुरीदास जी, क्या यहाँ की प्रसिद्ध नर्तकी चम्पा यही हैं ?

मनछुरीदास—हाँ सेठ साहब, इन्हीं के जौहर से बम्बई जगमगा रहा है। आपका नाम बच्चे बच्चे की ज़ुबान पर है।

चम्पा—मुझ नाचीज को क्यों शर्मिन्दा करते हैं ?

तनसुखलाल—हाँ, प्रिये, चम्पाबाई जी, आज तो आप की मधुर वाणी से कुछ सुनूँगा।

चम्पा—(स्वगत) हा भगवन्! क्या यह भी देखना बदा था, कि पिता पुत्री को न पहिचाने! परन्तु यह भी अच्छा है, कहीं पहिचान न जावे।

तनसुख०—क्या मेरी प्रार्थना स्वीकृत होगी ?

चम्पा—वाह, यह तो मेरा सौभाग्य है। हां, बन्ने कुछ सुनाओ।

(बन्ने सारंगी सँभालता है, लल्लू थाप देता है)

साकी पिला शराब, तेरा भला होगा।
इक जाम और दे दे, तेरा भला होगा॥
इस मय में, मैं हूँ बस गया, इस मय के मैं बिना।

जिन्दा न रह सकूँगा, तेरा धरम होगा॥
साक़ी न रूठ पिला, तेरा भला होगा॥

(इतनी देर तक मनछुरी शराबी का सा अभिनय करता है, तनसुख ध्यान-मग्न सा बैठा है)

मनछुरी०-वाह, वाह, खूब कहा। कैसे (अभिनय करता हुआ) साक़ी पिला शराब। (चम्पा की ओर हाथ बढाता है, चम्पा झटका देकर हाथ हटा देती है)

(चम्पा से) आप तो नाराज हो गईं। सेठ जी तो आप का गाना सुनने के लिये आये हैं।

तनसुख०-हाँ बाई जी, बड़ी मेहरबानी होगी, यह सेवा में… … ……। (कुछ नोट निकाल कर पैरों के पास रख देता है)

चम्पा--हैं. हैं, ये क्या करते हैं। हाँ, लल्लू, मौला, शुरू करो। (लल्लू इत्यादि वाद्य बजाते हैं)

* चम्पा का गाना *

सखी री कैसे काटूँ रैन-
उन बिन इन नैनन को चैन न, इन बिन उनको चैन।
पास खड़ा वह मैन चलावत, तीखे तीखे सैन॥
सखी री कैसे काटू रैन!
उन मम निधि बिन, तन गृह में मन रहता शान्त है, न।
इस शैया पर आज हठीली, पैर रखूँगी मैं, न॥
सखी री कैसे काटूँ रैन॥

मनछुरी०-वाह, वाह, क्या कहा है! बहिश्त में पहुँचा दिया (तनसुख से) देखते क्या हो, इन्हें ही बुलाना।

तनसुख०-आज तक तो सुना ही था, परन्तु आज प्रत्यक्ष देख लिया, आप से गाने वाले इस देश में कम हैं। परन्तु, क्या चम्पा, तुम्हारा नाम चम्पा ही है?

चम्पा--(स्वगत) हा, भगवन्! (प्रकट) हां, मुझ नाचीज़ को यही कहते हैं।

मनछुरी०-कुछ और भी सुनाइये। यह तबले वाला तो यूँ ही है, सारा मजा किरकिरा कर दिया।

चम्पा-जी, क्या बताऊं, नौसिखिया है। (बन्ने इत्यादि से) तुम जा सकते हो।

(बाजे वालों का प्रस्थान)

❋ चम्पा का गाना ❋

हम कौन हैं, कैसे हैं, तुम जानते क्या हो?
बदकिस्मती के मारे, तुम मानते क्या हो?
तुम क्या समझने आये, कुछ भी समझ के जाओ;
याँ दम पै बीतती है, पहचानते क्या हो?
हम 'उस' को सुनाते हैं, वह भी कभी सुनेगा,
दिन एक 'वह' आयेगा, तुम जानते क्या हो?

मनछुरी०-वाह, वाह, वाह, आप कमाल कर गईं।

चम्पा—सुना है कि सेठ साहब बाहर से आये हैं, यहाँ कहाँ मुक़ाम है?

तनसुख०-मेरे एक सम्बन्धी यहाँ हैं, उन्हीं के यहाँ ठहरा हूँ। यह तो बताओ कि यदि मैंने तुम्हे देहली बुलाया तो प्रति दिन का क्या लोगी?

चम्पा-अभी तो आप यहाँ ठहरेंगे, ऐसी बातों की तय करने की अभी क्या आवश्यकता है?

मनछुरी०--तनसुखलाल जी अब तो चलिये,बोतल की देवी ज़ोर कर रही है। मस्तिष्क चक्कर खा रहा है।

तनसुख०-चलो-(चम्पा से) आपके दर्शन फिर करूँगा।

(दोनों जाते हैं)

चम्पा—(स्वतः) गये, गये, मुझ अभागी के भाग्य गये। नीच वेश्या के आदरणीय पिता गये। बेटी को बेच कर धनोपार्जन करने वाले पिता गये। परन्तु थे तो मेरे पिता ही, कुछ भी हो नारी नारी ही है, उसके हृदय की करुणा कहाँ जावे, उसका हृदय कठोर कैसे बना रहे?

रक्खो कहीं चन्दन, सुगन्ध उसकी जा सकती नहीं।
नारी हृदय की दया को, विपत्ति खा सकती नहीं॥

परन्तु चन्दन कब तक शीतल रह सकता है? यदि कष्टों से, दुःखों से उसे अधिक रगड़ा जावे, तो वह भी भभक उठेगा। परमात्मा मुझे शक्ति दो कष्ट सहने की और दयालु तो तुम सदा ही रहे हो। ओह, दस बजने का समय आया, चलूँ और किसी एकान्त कोने में बैठ कर दिन भर के भले बुरे का हिसाब उसे दे दूँ।

"मेरा मनमोहन, मोहन सुन्दर"

(गाते हुए प्रस्थान)
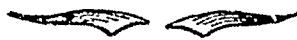
दृश्य २ अंक १

स्थान—डॉक्टर की डिस्पेन्सरी।

स्टेजः—[डाक्टर कुर्सी पर बैठा है, पास ही एक कुर्सी पर दूसरा व्यक्ति है. उसके मुख का थोडा भाग दिखाई देता है, (Slanting Face) वेश भूषा दोनों की उत्तम है]

डाकृर—तो आपका ही नाम मिस्टर विनयकुमार है ?

युवक—जी हाँ, मैंने ही आपसे पत्र-व्यवहार किया था, क्या आप समझते है कि मै अच्छा हो जाऊँगा ?

डाकृर—हाँ, आपका केस होपलैस तो नही है, परन्तु फिर भी चिन्तनीय अवश्य है।

विनय—मैं बहुत से डाकृरों का इलाज करा चुका हूँ। सैकड़ों रुपये वैद्यों की जेबो में भी गये। बड़े शोक के साथ कहना पड़ता है कि आजकल अधिकांश वैद्य और बहुत से डाकृर, रोगियों को लूटना ही चाहते हैं। तभी तो आयुर्वेद चिकित्सा-प्रणाली पर से देशवासियों की श्रद्धा उठती जा रही है।

डाकृर—होगा। परन्तु आप लोग विचार करें कि बीमारी के लिये आप भी उत्तरदायी हैं।

विनय०—हाँ, मैं मानता हूँ! परन्तु आप देखेंगे कि आयुर्वेद भी किसी देशी, विदेशी चिकित्सा रीति से कम नहीं है, परन्तु आज लुटेरे वैद्य, अनपढ़ भिषग्रत्न, और गँवार आयुर्वेदाचार्यों के कारण हमारी यह दुर्दशा हो रही है।

डाकृर—ठीक है महाशय, परन्तु मैं यह सब जानता हूँ।

विनय०—डाकृर साहब, आप इन बातों को नहीं सुनना चाहते? मैं जानता हूँ कि आपका समय नष्ट होगा, परन्तु आप निश्चिन्त रहिये कि मैं समय नष्ट होने के हर्जाने की पूर्ति कर सकूँगा। डाकृर, आपको सुननी होगी, देशवासियो की करुण कहानी सुननी होगी।

डाकृर—यह समय का लालच नहीं है, मिस्टर विनयकुमार वरन् तुम्हारा खयाल है। भाई विनयकुमार तुम बहुत दुर्बल हो, निर्बलता ही तुम्हारा रोग है, तुम्हें आवेश और क्रोध नहीं करना चाहिये। तुम्हारे फेफड़े कमज़ोर हो गये हैं, क्या मैं कहूँ कि इसका क्या कारण है?

विनय—ब्रह्मचर्य्य नाश और बाल-विवाह।

हाय पतन की बलिवेदी पर, भारत यह बलिदान हुआ।
आश्रम-धर्म न पालने से, है स्वर्ग-देश श्मशान हुआ॥

डाकृर—यही बात है, विनयकुमारजी, परन्तु आप हताश न हों, उसकी इच्छा हुई तो आप शीघ्र ही अच्छे हो जावेंगे।

विनय०--ओफ़, सिर में चक्कर, बदन में थकान, पीठ में दर्द, जवानी इतनी सर्द, यह है हाल मुझ जैसे युवकों का फिर देश पनपे तो कैसे ? समाज की उन्नति हो, तो कैसे ? हाँ, तो डाक्टर साहब आप वही दवा दें, जिससे मुझे फ़ायदा हो।"

डाक्टर—आप विवाहित तो हैं शायद .....?

विनय०--जी हाँ, मुझ अभागे का विवाह, उस स्वर्ग की देवी से तभी कर दिया गया था, जब मैं केवल बारह वर्ष का था तब से आज तक मेरा उसका जीवन भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में गुजरा। यद्यपि आज मैं मिलमालिकों में मुख्य तथा धन कुबेरों में हूँ, परन्तु मेरा जीवन शुष्क रेगिस्तान के समान हो गया है।

डाक्टर—अरे, तो सेठ विनयकुमार आपही है, आप ही यहाँ के धन कुबेर है। (माथा ठोक कर) हमारे लखपतियो का जिन्हें किसी बात की कमी नही है यह हाल है!

विनय०-वही अभागा हूं! मुझे एक डाक्टर ने क्षय रोग बताया है।

डाक्टर—नही, क्षय, वक्षय कुछ नही है, यह तो आपकी भावना है। हाँ निर्बलता अवश्य है, वह भी नियम-पूर्वक दवा लेने से जाती रहेगी। अब मै साफ़ शब्दों में आप से कहदूँ, कि आपका उचित समय से पूर्व ही विवाह कर लेना आपकी बीमारी का कारण बना।

विनयकुमार—अफ़सोस!

वीर, द्रोण, भीष्म, कर्ण से जहां होते थे!
कृष्ण, राम, बुद्ध से ज्ञानी जहां होते थे!
वह देश दुराचार से है आज भर गया।
आदर्श उच्च आज, हमारा किधर गया?

डॉ०—यह दवा लीजिये।

विनय०-इसे किस तरह लूँ?

डॉ०—जैसे पहले लेते थे, कोई ख़ास परहेज़ नहीं।

(एक व्यक्ति का प्रवेश)

आगन्तुक—डॉक्टर साहब, ज़रा चल कर मेरे छोटे भाई को देख लीजिये, वह न्यूमोनिया से पीड़ित है।

विनय०-अच्छा तो डॉक्टर साहब मैं भी चलूं?

डॉ०—चलिये, मैं भी चलता हूँ, आपके घर तक अपनी गाड़ी में पहुँचा दूंगा।

विनय०-धन्यवाद! मेरी गाड़ी बाहर खड़ी है।

(प्रस्थान)

दृश्य ३ अंक १

स्थान-मनछुरीदास का मकान

मनछुरीदास—(स्वगत) लो यारो ! यह हम रहे मनछुरीदास। मन में जो छुरी है उसके दास, धत्तेरे की क्या कह गया मैं, कैसी छुरी और कैसे दास। ख़ैर लोग तो हमें यही कहते है और यह अपने राम का मकान है, मकान क्या दुकान है, जहाँ, जुआ धुँवाधार हो, चोरी की वस्तुओ का व्यापार हो, वह तो मकान क्या दूकान हुई। लेकिन मैं बनिया तो नही जो दूकान करूं, भाई यह तो मचान है मचान, जिस पर खड़े होकर सब तरह के अपराधी, पुलिस रूपी कुत्ते-नही शेर की ताक में बैठते हैं और उन्हें देखते ही मेरे घर में छिप जाते हैं और रसगुल्ले उड़ाते हैं। और जब कोई खुफ़िया पुलिस का हाउन्ड शिकार की तलाश में इस मकान यानी मचान को पवित्र करता है, तब बन जाता है श्मशान, सुनसान।

(टहलता है) ओ, हो, हो, हो, यह तो वे आ रही हैं, क्या नाम, श्रीमती चञ्चलादेवी जी। ग़जब हुआ, मुझे बेकार टहलता देख कर तूफ़ान आजायगा, उथली कढ़ाई में उफान आजावेगा।

आप लोग समझे नही, यह हमारी धर्मपतनाजी हैं, यानी मुझ नाचीज़ को धर्म की पत रखना सिखाने वाली मास्टरनी हैं, जिनका यदि मॉस भी काट लिया जावे तब भी डर तो रह ही जाती है। हाँ तो, कैसी सुन्दर है यह, कैसी

प्यारी है, कैसी सलौनी है, दिल में ऐसे भाव आ रहे हैं कि बस कवि बनने वाला हूँ।

उनकी तस्वीर उतारने का किसी फोटोग्राफ़र को साहस नहीं हुआ, मैं ही तारीफ करदूं। बिहारीजी का नख-शिख वर्णन झक मारेगा। जीभ उनकी कैसी है, मानो कैंची हो, नहीं छुरी हो·····लाहौल-भाई भूल रहा हूँ बिलकुल नीम की पत्ती हो। आँखें तो मानो बड़े बड़े प्याले हैं, जिनमें लाल-लाल मदिरा सदा छलका करती है और हृदय बस मधुशाला है ही जहाँ अच्छे बुरे उच्च और अछूत तथा हिन्दू और मुसलमान का भेद भाव नहीं है और वे सारी तो मधुबाला ही हैं। उनकी चिल्लाहट इस मकान, दूकान, मचान, श्मशान में··· ···हाय वे आ ही गईं।

(एक विकट मूर्ति स्त्री का प्रवेश-आँखो में सुरमा है, वेष-भूषा उत्तम है, चेहरे पर छिछोरापन है)

चञ्चला—यह क्या तूफ़ान और श्मशान का राग बरपा है, न दिन को चैन न रात को चैन, बस पागलों की तरह से बकते रहना। यह भी तो नहीं होता कि कहीं नौकरी ही करलें। परमात्मा ने तनसुखलाल सरीखे आँखों के अन्धे और गाँठ के पूरे दिये परन्तु ये तो कलियुग में हरिश्चन्द्र बने हुए हैं, बीबी चाहे कुछ दिनों बाद भीख माँगने पर मजबूर हो, बच्चे दूसरों को टुकर-टुकर देखा करें···।

मनछुरी०—यह आई हैं, वचन की पक्की हरिश्चन्द्र की नानी ···।

चञ्चला—इसके मानी ?

मनछुरी०—चन्द्र टरै, सूरज टरै, टरै जगत व्यवहार ।
पै दृढ़ हठ चञ्चला की, हटै न दूजी बार ॥

चञ्चला—बस, बस, रहने दो, तुम सदा ऐसे ही रहते आये हो ।

मनछुरी०—बुरा न मानना, श्रीमान्, नहीं श्रीमती चञ्चलाजी, पर यह तो कहे कि, यह जो साड़ी तुम पहिन रही हो यह तो मै ही लाया था ।

चञ्चला०—जी हाँ, चोरी की ।
मनछुरी०—यह नेकलैस ?
चञ्चला०—डकैती की ।
मनछुरी०—यह रिस्टवाच ?
चञ्चला०—उड़ाई हुई ।

मनछुरी०—प्रिये, तुम भी उड़ाई हुई ...। है, हैं, यह जूता मत उतारो ।

चञ्चला—देखो जी, तुम यह समझ लो.....है यह कौन आरहा है, जिसको यह नही मालूम कि इस घर में तीन बार "भोलानाथ" की आवाज लगा कर अन्दर आना होता है, कोई शिकार हो तो अच्छा, परन्तु नही यह तो ..लो, पास ही आ गया ।

[एक व्यक्ति का प्रवेश, सिर पर गोल टोपी है, चूड़ीदार पाजामा पहिने हुए है, बन्द कालर का कोट है, पोशाक बढिया है]

मनछुरी०—आइये जनाब, तशरीफ़ लाइये।

आगन्तुक—(चुप)

मनछुरी०—जनाब का दौलतख़ाना।

आगन्तुक—(चुप)

चंचला—(आगन्तुक के पास बढ़ कर) आप यहाँ ठहरना चाहते हैं ?

आगन्तुक—(चुप)।

मनछुरी०—(स्वतः) कम्बख़्त बहरा है या गूँगा, कुछ मालूम नहीं पड़ता। ज़रूर कुछ दाल में काला है। अच्छा अब ज़रा सख़्ती से बोलूँ। (प्रकट) तुम बताते हो या पुलिस को बुलाऊँ ?

आगन्तुक—भाई मैं गूंगा और बहरा हूँ, समझे न ? मुमकिन है, मैंने नहीं सुना हो, परन्तु यह तो बताइये, कि इस मकान में कौन रहता है, मतलब, उसका नाम क्या है, समझे ना।

मनछुरी०
चंचला० } समझ गये।

मनछुरी०—बैठो भाई, गूँगे और बहरे, तुम तो हमारी टोली में रह सकते हो। यह चाल दूसरी जगह चलना, अपना नाम तो बताओ।

आगन्तुक—ति…ति…तिगड़मपरशाद-समझे ना ?

चञ्चला—हैं, हैं, हैं, हकलाइये मत, मतलब की कहिये।

तिग०—सुना है, तुम सेठ तनसुखलाल के बहुत गहरे समझे ना-दोस्त हो।

मन०—हाँ।

तिग०—बस तब तो, समझे ना, उनसे मुझे मिला दो, वे मेरे भी बड़े भारी दोस्त हैं।

मन०—जब तुम्हारे मित्र हैं, तो तुम्हीं क्यों न मिल लो?

तिग०—खैर भाई, मेरे मित्र न सही, तुम मिला तो दोगे न ····?

मन०—काम।

तिग०—बहुत बड़ा इनाम।

मन०—वह कैसे?

तिग०—वह ऐसे कि तुमने सेठ फ़क़ीरचन्द कानपुर वालों का नाम तो सुना है न ··उन्हीं की एक मात्र लड़की से इनके लड़के का समझे ना ·····।

मनछुरी०
चञ्चला } समझ गये।

चञ्चला—उनका ब्याह करा दिया जावे।

तिगड़म—और रुपया उड़ाया जावे।

मनछुरी०—भाई, सोची तो दूर की। चलो इस काम में, मैं तुम्हारा सहायक हूँ। और (चंचला की ओर संकेत करके) यह भी सहायता देंगी ?

तिग०—यह कौन ?

मनछुरी०-श्रीमान चञ्चलादेवीजी, मेरी धर्मपतना, यानी .....।

चञ्चला—बस रहने दीजिये, ये अपनी तेज़ अक़्ल। कहीं आपकी नाक पर ही धार न जम जाये। क्यों किसी महमान के आगे हँसी उड़वाते हो ?

मन०—ओफ़, ओ, बड़े महमान आये आपके। कुछ ख़ातिर तो करो या ज़ुबान की ही लपालपी करती रहोगी ? कुछ जलपान का प्रबन्ध करो, मैं तब तक इन्हें बाग़ीचे की सैर कराता हूँ।

(प्रस्थान)

दृश्य ४ अंक १

स्थान—विनयकुमार का मकान।

स्टेज—[तारा अकेली टहल रही है। वह २२-२३ वर्ष की सुन्दर हँसमुख स्त्री है, वेष भूषा धनिकों की सी, साज सामान उत्तम है]

तारा—(स्वगत) निराश में आशा की ज्योति तुमसे ही तो मिलती है। बुरे समय में तुम ही तो याद आते हो। कुछ कहते हैं कि संसार का चक्र प्रकृति द्वारा ही चलता है, परन्तु प्रकृति का चलाने वाला भी तो कोई है, हाँ, है, अवश्य है। मीरा के नटनागर, सूरदास के बाल कन्हैया तुम कहीं अवश्य छिपे हुए हो। मुसलमान तुम्हें खुदा, ईसाई गॉड और हिन्दू तुम्हे परमात्मा कहते हैं, परन्तु हो तो तुम एक ही, फिर मेरी बात तो तुम्हें सुननी ही होगी। ईश्वर क्या मैं तुमसे कहूँ कि तुम्हे क्या करना होगा ?

सर्वज्ञ, सर्वनाथ ही कहता संसार है ;
फिर क्यों बताऊँ, क्या तुम्हें मेरा विचार है ?

हे प्रभो ! यदि तुमने जन्म दिया तो फिर इतने कष्टों की भरमार क्यो ? यदि धन दिया है तो धन के उपभोग करने की शक्ति क्यों न दी, यदि तुमने देवता सा पति दिया, तो वह बीमार क्यों ?

तुम्हें सब व्यक्ति समदरशी, तथा त्रिपुरारि कहते हैं,
कोई सुख–मग्न क्यों रहते, तथा कुछ कष्ट सहते हैं?

परन्तु यह तो कर्म–फल है, इसमें उसका क्या दोष? वह तो बड़ा दयालु है, मनुष्य को उसने सुबुद्धि दी, सत्कार्यों में भक्ति दी और बाधाओं को हटाने की शक्ति दी। फिर मैं ही क्यों निराश होऊँ?

कहते हैं नाथ तुम अगम अजर महान हो!
दीनबन्धु, विश्व-नाथ, करुणा–धाम हो!!
द्रौपदी की लाज रखी, अहिल्या को तार दिया!
विश्व का अनेक बार, आपने उपकार किया!!
जग को नचाया, नाचे आप लीलाधाम हो!
तारा के तो सदा स्वामी, आप ही भगवान हो॥

(सखी का प्रवेश)

सखी—यह बेसमय स्वामी को क्यों बुला रही हो? जानती हूँ, तुम्हें उनसे बहुत प्रेम है।

तारा—आओ लीला, कई दिन बाद आई, मैं तो सबके स्वामी को याद कर रही थी, वह तुम्हारा स्वामी भी और मेरा भी।......

लीला—ओ, हो, यह भगतन कब से बन गई!

तारा—मज़ाक़ नहीं है बहन! मैं आज कल सच्चे अन्तःकरण से परमात्मा को स्मरण करती हूँ।

लीला—मैं तुम्हारी बात का विश्वास करती हूँ हाँ, यह तो बताओ तारा ! तुम्हारा यह चाँद सा मुखड़ा दिनों-दिन मलिन क्यों होता जाता है ? ऐसी कौन सी कमी है, जो तुम्हें व्याकुल करती है। परमात्मा की कृपा से तुम्हें सेवकों की कमी नहीं है, वस्त्राभूषणों का अभाव नहीं है, तुम्हारे पति शहर के धनवान् व्यक्तियों में से है, पढ़े लिखे है, दानी और सच्चरित्र हैं, फिर तुम्हारी चिन्ता का क्या कारण है ?

तारा—न पूछो, सखि न पूछो ! तुमने भी तो उनका मुख देखा है, कैसा पीला-पीला हो गया है। आँखें गढ़े में धँसती जा रही हैं, मुख का तेज विलुप्त हो गया है और सच पूछो तो वे अपने स्वास्थ्य से हाथ धो बैठे है। अभी उस दिन की बात है, एक डाक्टर ने उन्हे क्षय बताया है।

लीला—यह नई बात नहीं है, बहन, आज कल के अधिकांश दम्पतियों का स्वास्थ्य ख़राब है। बहुतेरे तो ऐसी अवस्था में ब्याह दिये जाते हैं कि उन्हें विवाह का तनिक भी महत्त्व नहीं मालूम होता। वे अज्ञान गढ़े में आँख बन्द कर ऐसे गिरते है कि उन्हें, जब तक कि अपने स्वास्थ्य से पूर्ण रूप से हाथ नहीं धो बैठते हैं, चेत नहीं होता।

तारा—ठीक है सखी परन्तु प्रत्येक परिस्थिति के लिये प्रकृति ने उपाय भी तो सुझाये है। देखो, शायद स्वामी हो आ रहे हैं। देखो न कैसे दुर्बल हो रहे है !

(विनयकुमार का प्रवेश)

विनय कुमार—यहाँ तो सखियों का मधुर वार्तालाप हो रहा है, मैंने विघ्न तो नहीं डाला ?

लीला—आइये, ये आपका ही ज़िक्र कर रहीं थीं, कहती थीं कि आप इन्हे बहुत कष्ट देते हैं।

तारा-क्यों व्यर्थ झूठ बोल रही हो । मैं भी कभी समझ लूँगी।

विनय०-सच बात है मैं इन्हें बहुत कष्ट देता हूँ। ये मेरी टहल और सेवा में अपने शरीर को भी भूल बैठी हैं। रात को तीन बार उठ कर मुझे दवा देती हैं। मेरी ख़ातिर स्वयं भी बीमारों का खाना खाती हैं। कहाँ तक गिनाऊँ, इन्होंने मेरी सेवा में अपना तन, मन का भी विचार त्याग दिया है। मैं स्वय भी बहुत लज्जित हूँ। जी चाहता है कि इनके चरणों में सिर झुका दूँ।... ..

विमला०-लज्जित न करिये प्राणनाथ ! मुझे लज्जित न करिये । यह सब आपके ही चरणों का प्रताप है। हमारी पूर्वज देवियों का कितना उच्च आदर्श था--

सती सीता ने अहो, जिसके लिये इतना सहा।
कष्ट भी मानों स्वयं, सब कष्ट दे, तब थक रहा॥

उर्मिला का त्याग देखो, गा रहे इतिहास हैं।
मैं नहीं कुछ चाहती हूँ, आप मेरे पास हैं॥
पतिव्रता की सदा कहती रही है यह आत्मा।
क्रूर अन्यायी भी पति हो, तदपि है परमात्मा॥

विनय०-मैं-तुमसे बहस में नहीं जीत सकता, मेरी प्रिये! तुम देवी हो। हाँ, एक बात कहनी भूल ही गया था, आज पिताजी भी आये थे और आज ही चले गये।

तारा-अहोभाग्य! तुमने उन्हें ठहराया नहीं, जाने कैसे दिया। इतने वर्षों बाद तो आये थे, स्वास्थ्य तो अच्छा था? प्रफुल्ल कैसा है?

विनय०-मैंने उन्हे बहुत रोका, परन्तु उनके साथ एक और आदमी था, उसने उन्हें नहीं ठहरने दिया।

लीला--तो बहिन, फिर कब चलोगी?

विनय--कहाँ?

तारा--यह कह रही है कि हम आज इनके यहाँ खाना खावे।

विनय०-वाह, नेकी और पूछ पूछ! परन्तु मैं तो वही परहेज़ी खाना खाऊँगा।

तारा--हाँ प्रिय, थोड़े दिनो की और बात है, अब जल्द ही अच्छे हो जाओगे।

विनय०-तो चलो चलें, मैं तो तैयार हूँ।

तारा
लीला } हम भी तैयार हैं, चलिये।

(प्रस्थान)

दृश्य ५ अंक १

स्थान—तनसुखलाल का घर

स्टेजः—[तनसुखलाल, विशम्भरदास और भरोसेलाल फ़र्श पर बैठे हैं। तनसुखलाल मसनद के सहारे बैठा है, पास ही एक हुक्का रखा है]

तनसुख०—जब से बम्बई से आया हूँ, तब से दिल में कुछ अजीब बेचैनी सी रहती है। रह रह कर पुरानी बातें याद आती हैं। जिस परमात्मा को मैंने कभी स्मरण नहीं किया, उसी को याद करने को जी चाहता है।

विशम्भर०—सब झूठी बात है, कहीं परमात्मा भी यह कहता है कि तुम मुझे याद करो। हँ, हँ, हँ। (वीभत्स हँसी हँसता है)।

भरोसेलाल—वाह, भाई विशम्भर, यदि तुम गढ़े में गिरते हो, तो औरों को भी साथ रखना चाहते हो।

विशम्भर०—जी हाँ, आप ही तो सेठ जी के बड़े भारी हितू हैं और सब तो दुश्मन हैं, क्यों यही बात है न?

भरोसे०—मैं क्या जानूँ, तुम्हीं अपने मुख से स्वीकार कर रहे हो।

तनसुख०—लड़ो मत भाई। तुम मेरी तो फ़िक्र करते नहीं हो और बे बात की लड़ाई लड़ते हो। न जाने कौन

से ग्रह बिगड़े हैं कि, बीमारी ने घेर रक्खा सो अलग, और उस दिन सट्टे में पच्चीस हजार के टोटे में रहा। वह तो अच्छा हुआ कि, सोने की तेजी से घाटा बराबर हो गया।

बिशम्भर०—ठीक है सेठ साहब, एक ज्योतिषी ने मुझसे कहा भी था कि, आपके शनि खराब है और मङ्गल बिगड़े हुए है।

भरोसे०—(व्यंगपूर्वक) इसलिए आप ग्रह-शान्ति के लिये इस शुभचिन्तक मित्र को कुछ दे दीजिये।

विशम्भर०—इसमें तुम क्या सिखाते हो, वे अपने आप ही ऐसा करेंगे ?

तनसुख०—भाई झगड़ो मत, मेरे सिर में दर्द होता है।

बिशम्भर०—(स्वगत) सर दर्द नहीं तो क्या मानसिक शान्ति इन जैसो को मिलेगी। (प्रकट) मनछुरीदास भी आरहे हैं।

(मनछुरीदास तथा तिगडमप्रसाद का प्रवेश)

मनछुरी०—जैरामजी की सेठ साहब।

(बिशम्भर अभिवादन करता है, भरोसेलाल चुप है)

तनसुख०—आइये मनछुरीदासजी, मै आपको ही याद कर रहा था।

मनछुरी०—(स्वगत) मुझे तो अच्छे अच्छे याद करते हैं आप हैं किस गिनती में । (प्रकट) मुझे खुद आपका बहुत फ़िक्र रहता है, मैं बहुत पहले ही आने वाला था । कल से वैसे भी बहुत कम .फ़ुरसत मिली । (तिगड़मप्रसाद की ओर संकेत करके) भाई साहब कल शाम की ट्रेन से कानपुर से आये हैं। आप जानते ही हैं बहुत दिनों बाद मिलने में कितनी उत्कण्ठा रहती है।

तनसुख०—भाई सिर में दर्द रहता है, कोई इसकी दवा तुम्हारे भाई से पूछो न…… ।

तिगड़म०—(स्वतः) दवा तो एसी बताऊँगा कि बच्चा सात जनम याद रखेंगे।

मनछुरी०-जी हाँ, सो तो है ही। हाँ भाई तिड़गम तुम सेठ जी से क्या कहने वाले थे, क्या कहते हो ?

तनसुख०—सिर में दर्द रहता है, ये भाई तुम्हारे क्या करता · आकछी ··(···छींकता है)।

तिगड़म०—(स्वगत) क्या बताऊँ, क्या काम करता हूँ ? दो को लड़ा कर दाम पैदा करता हूँ। शादी, ब्याह कराकर पैदा नाम करता हूँ। बेवकूफ़ों की मौत का,समझे ना, अञ्जाम करता हूँ। (प्रकट) जी मैं मिल में काम करता हूँ।

तनसुख०—(न सुनकर) मिल के मालिक हो ?

निगड़म०—(स्वगत) यदि ऐसा होता हो फिर मैं इन जैसों के यहाँ क्यों चक्कर काटता फिरता। (प्रकट) जी मैं मिल में नौकर हूँ।

मनछुरी०—(जोर से) ये मिल में नौकर हैं साहब! और आपसे बातचीत करना चाहते हैं। सेठ फ़क़ीरचन्द का नाम तो सुना है आपने?

तनसुख०-हाँ, हाँ, ख़ूब।

तिगड़म०-कानपुर के बड़े सेठ फ़क़ीरचन्द-समझे ना, उनकी एक मात्र पढ़ी लिखी, स्कूल जाने वाली, सुन्दर, स्वस्थ व सीधी कन्या के साथ, आपके पुत्र श्रीमान प्रफुल्ल-कुमार का··· ।

तनसुख०-(बीच में बोलता हुआ) ठीक ठीक, मैं सोचूँगा।

मनछुरी०—सोचने की क्या बात है सेठजी। आपका लडका और उनकी लड़की। आप भी अमीर और फिर वे भी ग़रीब नहीं। उनके मरने के बाद उनकी लड़की को ही तो सब मिलेगा और यदि परमात्मा ने चाहा तो शादी के होते ही—

तिगड़म०-समझे ना।

मनछुरी०—बस फिर सब तुम्हारा ही है।

तनसुख०-सिर में बहुत दर्द रहता है, हाँ तो भाई सोचूँगा तो सही।

भरोसेलाल--परन्तु उनकी अवस्था का भी तो विचार करना होगा।

विशम्भर०-शुभ कार्य्य में कैसा विचार, भाई भरोसेलाल जो बात कहते हो सो चुभती हुई।

मनछुरी०—ठीक है, जब दोनों के बाप राजी तो क्या करेगा काजी ?

तिगड़म०-भरोसेलालजी ठीक कहते हैं, परन्तु हम लोग भी सेठ जी के दुश्मन नही हैं, समझे ना।

तनसुख०-हाँ भाई-सिर में दर्द, देखो सोचूँगा।

विशम्भर०--बस ठीक है, अब तो रजामन्दी ही समझिये। अब प्रफुल्ल बाबू भी बच्चे नहीं हैं। परमात्मा की कृपा से अब के फागुन में पूरे १२ वर्ष के हो जावेंगे। इतनी ही या इसके आसपास उनकी लड़की भी होगी।

तिगड़म०—ठीक है, सेठ जी सोच लें, समझे ना, हाँ एक बात और रह गई।

तनसुख०-कहिये, आजकल तो ...... वही सिर में दर्द .....।

मनछुरी०-उसकी भी दवा हो जावेगी।

तिड़गम०-सेठ साहब, एक न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी बड़ी तरक्की कर रही है, समझे न '' ''।

तनसुख०-भाई,मैं तो कई कपनियों का पहले से ही मेम्बर हूँ।

मनछुरी०-अजी ये आपकी इज़्ज़त बढ़ाने की तदबीर कर रहे हैं।

तनसुख०-भरोसे-
विशम्भर० } वह क्या ?

मनछुरी०-आपको उसका डायरेक्टर बना दें।

तनसुख०—देखो भाई, सोचूँगा। सिर में दर्द ...।

मनछुरी०-इसके लिये तो शाम की हवा खाना बहुत उत्तम है।

तनसुख०-तो चलिये सब पार्क ही चलें।

सब-चलिये।

(सब जाते हैं, भरोसेलाल पीछे रह जाता है)

भरोसेलाल-(स्वतः) निस्सन्देह, मूर्ख व्यक्तियों का तो लूटा जाना ही उत्तम है। यह पृथ्वी बुद्धिमानों के लिये है, धूर्तों के लिये है। परन्तु जो विवेकी और धर्मात्मा व्यक्ति हैं, उनका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे ऐसे धूर्तों के षड़यन्त्र को मिट्टी में मिला दे। मैं तनसुखलाल का मित्र होने के नाते प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं उसे इनके षड़यन्त्र से बचाने का पूर्ण प्रयत्न करूँगा। सम्भव है इस कार्य्य में शत्रुता उत्पन्न हो जावे और यह भी सम्भव है कि, मुझे तन, धन की हानि भी सहनी पड़े, परन्तु—

मित्र का कर्त्तव्य है वह, मित्र के हित के लिये,
प्राण भी दे दे न चूके, मित्र के हित के लिये।

चलता हूँ, उनके साथ रहूँगा। उनकी सब चालों को बेकार करता रहूँगा। (प्रस्थान)

दृश्य ६ अंक १

स्थान-फ़कीरचन्द का घर

स्टेज--[एक कुर्सी पर १०-११ वर्षीय कन्या प्रेमलता बैठी दिखाई देती है। सामने रखी हुई छोटी सी टेबिल पर एक जर्मन बी-टाइम-पीस रखी है, बहुत सी किताबें तथा कापियों का ढेर लगा है, मेज़ पर साफ सफ़ेद मेज़पोश है। प्रेमलता, सरल, सुन्दर और हँसमुख बालिका है]

प्रेमलता-(कुर्सी पर से उठते हुए) अब तो नहीं पढ़ा जाता। पूरे दो घन्टे हो गये। (अँगड़ाई लेते हुए) बाबू जी पढ़ने के लिये कहते है पूरे दो घन्टे पढ़ें तब मालूम हो। पढ़ना न हो गया भूत का सिर हो गया। जब देखो पढ़ना, पढ़ना, पढ़ना। जिसे देखो मुझ पर आँखें निकाल रहा है। बड़ी ताई आती है तो कहती हैं प्रेम पढ़ती नहीं है। छोटी ताई कहती है कि मै तो इतनी उम्र में घण्टो पढ़ा करती थी। जी हाँ, तभी तो उस चिट्ठी में मैंने बीस ग़लतियाँ निकाली थीं। ख़ैर पढ़ो भी, घण्टा, दो घण्टा, चार घन्टे, परन्तु यहाँ तो चौबीसो घण्टे यही राग। मैं तो तग आगई पढ़ते पढ़ते और पढ़ाते भी क्या हैं? बिल्ली, कुत्ते की कहानियाँ, ज़्यादा बढ़े तो बादशाह की कहानी या कुछ और अण्ड, बण्ड। इतना तो मैं पहले ही जानती थी।

कहने को गायन भी है, परन्तु साल भर में स, र, ग, म, निकालना सिखाते हैं और मैं सीखूँ भी क्या क्या। कानपुर

ज़िले का भूगोल, हिन्दुस्तान का भूगोल, हिन्दुस्तान का इतिहास, हायजीन, साहित्य-माला और भी न जाने क्या क्या। अभी छटी क्लास में हूँ और बीस किताबे है।

कोई पूछे इन अक्ल के अन्धो से कि इससे इनका क्या फ़ायदा हुआ। मुझे अव्वल तो नौकरी नहीं करनी और यदि कभी करनी चाही, तो इन किताबों से क्या होगा? कोई ढङ्ग की बात ही नहीं। मैं तो हैरान हो गई पढ़ने से (मेज़ के पास जाती है) गुस्सा तो ऐसा आता है कि सब किताबे (हाथ ज़ोर से मेज़ पर मारती है, दावात उलट जाती है)। फेंक दूं। ओ! यह दावात भी मरी अभी ढुलने को थी। अब मास्टर साहब पढ़ाने को आवेंगे और नाराज़ होंगे। कम से कम मेज़पोश तो उलट दूँ। (किताबे हाथ में उठाती है)।

एक आवाज़-प्रेमलता।

(प्रेमलता चौंकती है, किताबें हाथ से छूट जाती हैं)।

प्रेमलता-हाँ। (अलग) माताजी को भी अभी ही आना सूझा था। हालाँकि जानती कुछ भी नहीं हैं, पर मेरी ग़लतियाँ तो जरूर निकालेंगी और ऐसे ही वे हैं, तिगड़मपरशाद, मेरे चाचाजी जब देखो, तब ब्याह की ही बात चीत और ऐसी ही माताजी हैं कि, जब वे होते नहीं हैं, तब तो ख़ूब बुराई करती हैं, कहती हैं "ऐसे ही ऐरे-ग़ैरे, पचकल्याने मुफ्तख़ोर है।" और जब वे होते है, तब ख़ूब ख़ातिर करती है।

(फ़क़ीरचन्द की पत्नी श्रीदेवी का प्रवेश)

श्री०-प्रेमलता क्या कर रही है? कुछ न कुछ सूझा ही करता है। (मेज़ को देख कर) अरे यह स्याही भी गिरा दी। कल ही तो मेज़पोश बदला था और यह किताबें कैसे गिर पड़ी? पगली कहीं की, चार दिन बाद दूसरे घर जायगी, वहाँ.....।

प्रेमलता-दूसरा घर कौनसा माताजी?

श्री०-बस माताजी कहना, सीख गईं स्कूल जाकर। ग्यारह बरस की हो गई और यह नहीं मालूम कि दूसरा घर किसे कहते हैं?

प्रेमलता-अगर आप नाराज़ होंगी तो मैं दूसरे घर कभी न जाऊँगी।

श्री०-ये लच्छन आज ही मालूम हुए-पूरी क्रिश्चियायनी बन गई है।

प्रेम०-माताजी, मैं उस मास्टर से नहीं पढ़ूँगी, बन्दर सी सूरत का सफ़ेद डाढ़ी वाला मास्टर। मईनो कपड़े नहीं धुलवाता.....।

श्री०-दुर पगली! तुझे आज खुशखबरी सुनाऊँ, दिल्ली में तेरे चाचाजी तेरी शादी तय कर आये हैं...।

प्रेम०-वही, तिगड़मप्रशाद।

श्री०-तू भी उन्हें तिगड़म कहने लगी। उनका नाम तो त्रिविक्रम है।

प्रेम०—होगा, अच्छा, माताजी, कल मुझे दो किताबें और लानी हैं।

श्री०—दिल्ली के बड़े भारी सेठ हैं।...

प्रेम०—माताजी, मैं तो अपनी एक सखी से शादी करूँगी सचमुच मेरी उससे बहुत दोस्ती हो गई है।

श्री०--पगली कहीं की, कहीं लड़कियों को लड़कियों से शादी होती है ?

प्रेम०—और भी सुनो माताजी, मैं बॅडमिन्टन के लिये कितनी बार कह चुकी हूँ।

श्री०—तुझे अपनी बकबक के सिवा किसी दूसरे की भी सुनने की फ़ुरसत मिलती है ?

प्रेम०—अब के सरस्वती पहले नम्बर पास हुई है, तभी तो उसकी माँ ने उसके लिये आसमानी साड़ी ...।

श्री०—कुछ सहूर के लच्छन सीख पढ़ने में क्या धरा है ?

प्रेम०—बस, यही तो मैं कहती हूँ, माताजी। इतना अधिक पढ़ने में क्या धरा है और सुनो तो कल प्रदर्शनी में जो हवाई जहाज देखा था, उसे खरीद क्यों न लो ?

श्री०—तुझे तो हमेशा ऐसी अजूबी बातें ही सूझा करती है। भला हवाई जहाज का क्या करेगी ?

प्रेम०—(हँसकर) हवाई जहाज़ का क्या करते हैं, माताजी तुम नहीं जानती क्या ?

(फ़क़ीरचन्द का प्रवेश)

(प्रेमलता दौड़कर अपने पिता के पास जाती है) ।

प्रेम०—पिताजी, माताजी यह भी नहीं जानतीं कि हवाई जहाज़ का क्या होगा ?

फ़क़ीरचन्द-हाँ बेटी ! तुम्हारी माँ ऐसी ही हैं, बिचारी स्कूल में कहाँ पढ़ी हैं ? (श्रीदेवी से) तो तुम्हारी राय यह सम्बन्ध पक्का कर लेने की है ?

श्री०—क्या बुरा है, घर और वर देखना चाहिए । इसके चाचा देख ही आये हैं, वैसे तनसुखलाल देहली के भारी सेठ गिने जाते हैं। बम्बई में भी उनके कई मिल हैं, तथा बड़े-बड़े स्टोर्स हैं और तो मैं कुछ भी नही जानती, पर सम्बन्ध ठीक है ।

फ़क़ीरचन्द—लेकिन पहले तो अपना ऐसा विचार था कि, प्रेमलता को ख़ूब पढ़ा लिखा कर फिर शादी करेंगे और किसी ग़रीब, सुन्दर और स्वस्थ वर को देख कर, घर पर ही रखेंगे, समझेंगे कि वही लड़का है ।

प्रेम०—(स्वतः) और मैं तो कुछ हूँ ही नहीं ।

श्री०—वह तो ठीक है, पर देखो, ऐसा घर भी तो मिलना कठिन है ।

(तिगड़मप्रसाद का प्रवेश)

प्रेमलता—नमस्ते तिगड़म चाचा ।

श्री०-हैं, फिर वही तिगड़म । ख़ाली चाचा कहो ।

प्रेम०--नमस्ते खाली चाचा (हँसती है)।

श्री०--इस लड़की को कभी समझ नही आयेगी।

फ़क़ीरचन्द--क्यो भाई त्रिविक्रम, तुम क्या समझते हो, क्या करना चाहिए? तुम तो वर और घर दोनों ही देख आये हो?

तिगड़म०--जी हाँ, तनसुखलाल देहली के बड़े भारी--समझे ना--सेठ हैं। परमात्मा की कृपा से मोटर गाड़ी, घोड़ा, ताँगा वग़ैरह सभी है।

श्री०--बस तो फिर, सुनाजी, तय रहा।

फक़ीरचन्द--जैसी तुम सबों की सलाह हो, मैं तो जब तुम सब कहोगे, स्वीकृति का पत्र लिख दूँगा।

श्री०--हम सब राजी हैं। (प्रेमलता से) प्रेमलता पूजा करने मन्दिर को चलती है?

प्रेमलता--चलो।

फ़क़ीरचन्द--बहुत गरमी है, मैं भी नहाने जाता हूँ।

[तीनो का प्रस्थान]

(त्रिविक्रम अकेला रह जाता है, टहलता है)।

तिगड़म०--आखिर तीर लग ही गया। त्रिविक्रम की तिगड़म भला चूकती तो कैसे! वाह, क्या दूर की सूझी है कि अच्छे-अच्छे भी दाँतो तले उँगली दबायेंगे।--समझे ना--फ़क़ीरचन्द की इकलौती लड़की प्रेमलता किसी दिन उसकी लाखों की सम्पत्ति की मालिक होगी और मैं दूर

का भाई, मूँ टापता रहूँगा। नहीं, यह कभी न हो सकेगा। परन्तु यदि इसकी शादी वहाँ हो गयी तो फिर क्या ठिकाना, नहीं रहे, यहाँ रहे, वहाँ रहे और भी न जाने क्या गुल खिल जाँय—समझे ना—बस फिर श्री तिगड़मप्रसाद इस आलीशान हवेली के मालिक हैं। अहा हा, क्या दुनिया है कि जिसमें हम सरीखों की चाँदी है अहा, हा, हा।

चांदी है चांदी, यारो चांदी है।
दुनिया हम जैसों की बाँदी है॥

सच बात है, हम अपनी समझ से आसमान, जमीन पर ले आयँ, आँख वाले को अन्धा बनादें और लखपति को भिखारी। कवि-सम्राट अयोध्यासिंह भी तो हमारी ही प्रशंसा करते हैं। जब कहते हैं—

वे बबूलों में लगा देते हैं, चम्पे की कली,
ठीकरी को वे बना देते हैं, सोने की डली।
ऊसरों में हैं खिला देते, अनूठे वे कमल,
वे लगा देते हैं उकठे काठ में भी फूल फल।

हम इस सबका उल्टा कर देते हैं, परन्तु क्या यह दोष है? नहीं परमात्मा भी तो यही सब करता है। फिर इसमें बुराई क्या है?

(तिडगम गाता है)

समझदारों के लिये, दुनिया में जगह होती है।
धर्म--भीरु विवेकी की, क़िस्मत हमेशा रोती है॥

मूछों पै ताव देते हैं, औरो को बनाकर,
औरो की ज़िल्लत मे सदा हमको खुशी होती है ।
लोग कहते है कि यह त्रिविकरम नहीं तिगड्म है--
मेरे ही सामने तो उनकी अक़ल सोती है ।
जिसके करने में है जग, करता बुराई का ख़याल,
वही करके हम दिखा देते हैं यह मोती है ।

(प्रेमलता का प्रवेश)

प्रेमलता—वाह तिगड्म चाचा, गाते तो ख़ूब हो ।

तिगड्म०--(चौंक कर) हैं, तू तो पूजा करने गई थी, तू यहाँ क्या कर रही है, तूने मुझे कहते, गाते कुछ सुना तो नहीं, मैं तो थियेटर की नक़ल--समझे ना--कर रहा था । प्रेमलता कहना मत ...... ।

प्रेमलता—सब सुन लिया है, अभी कहती हूँ ।

तिगड्म०--ठहर तो ।

(प्रेमलता भाग जाती है, तिगड्म उसके पीछे पीछे भागता है) ।

दृश्य ७ अंक १

स्थान—विनयकुमार का मकान

स्टेज:—(विनयकुमार कुर्सी पर इकला बैठा हुआ है, सामने छोटी सी टेबुल रक्खी है। विनय एक दुर्बल व्यक्ति है मुख निस्तेज)

विनय०—(स्वतः) यदि मनुष्य धनी हो, तो क्या हुआ ?, यदि उसके पैरों पर सारे संसार की समृद्धि लोट रही हो, तो क्या हुआ ?, यदि उसके सामने सैकड़ों सेवक हाथ जोड़े खड़े हों, तो क्या ?, जब तक उसे मानसिक शान्ति न मिले, तब तक उसका जीवन नीरस है, मृतक है और शून्य है। वह संसार का सबसे अभागा व्यक्ति है। इसी शान्ति के लिये तो हमारा देश प्रसिद्ध था, ऋषि, मुनि जङ्गलों में जाते थे और शान्ति प्राप्त करने के उपाय सीखते और समझाते थे। हाय! आज हमारा देश ऐसे व्यक्तियों से ख़ाली है!

मानसिक शान्ति शारीरिक स्वास्थ्य के बिना नहीं मिल सकती और यही हाल मेरा है। दिन-रात बीमारी की चिन्ता ने पागल कर दिया। सौ रुपये रत्ती की दवाएँ खाईं, परन्तु सब वृथा। हे ईश्वर! तुझे क्या मंजूर है? मुझे अपनी चिन्ता इतनी नहीं सताती, जितनी उस स्वर्ग की देवी तारा की।

मुझ जैसे व्यक्ति के लिये उसने अपने जीवन की बाज़ी लगा दी है। वैद्यों ने, डाक्टरों ने, हकीमों ने मुझे क्षय बताया, परन्तु वह अपनी सेवा से मुझे अक्षय बनाना चाहती है।

कैसा अभागा हूँ मैं, कि मैं उसे पूरे दिल से प्यार भी नहीं कर सकता। सब ओर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई देता है। कोई उचित सलाह देने वाला नहीं। आह! यदि आज सेवाराम होता, मेरा बचपन का साथी, मेरा लँगोटिया दोस्त, तो सम्भव था कि कुछ सहायता मिलती। न जाने अब वह कहाँ होगा? ओह! कैसे याद है वे दिन, जब मैं, वह साथ-साथ खेला करते थे, साथ ही पढ़ा करते थे और साथ ही लड़ा करते थे। परन्तु वह मुझसे हर एक बात में तेज़ था। आज न जाने उसका क्या हाल होगा। मैं तो धन की नदी में डूबता हुआ एक तिनके का सहारा देख रहा हूँ।

(सेवक का प्रवेश)

सेवक—आपसे कोई मिलना चाहता है। गऊशाला या कांग्रेस का चन्दा माँगने वाला मालूम होता है।

विनय०—ओह! इनसे भी परेशान हो गया। दिन-रात कोई-न-कोई घेरे ही रहता है। (सेवक से) अच्छा भाई, उसे भी आने दो।

(एक व्यक्ति का प्रवेश, खद्दर का कुरता पहिने हुए है, सुन्दर व स्वस्थ है, सिर पर बडे-बडे बाल हैं)

विनय—(आगन्तुक की ओर न देखता हुआ) कहो भाई, तुम किस गऊशाला से आए हो या कांग्रेस के आदमी हो? महरबानी करके, मुझसे अधिक बातें न करना और यह भी ध्यान रक्खो कि मैं किसी भी सभा का सभापति नहीं बन सकता। कृपया जल्द बोलो।

आगन्तुक—भाई मैं विश्व की गऊशाला से आया हूँ और तुमसे स्नेह की भीख माँगता हूँ।

विनय०— क्षमा करो भाई (आगन्तुक की ओर देख कर) अँयँ, क्या कहा आपने?

आगन्तुक—विनय! तू तो मुझे भूल ही गया?

विनय०—(ध्यान से देख कर) कौन भाई सेवाराम! (दौड़ कर आलिंगन करता है) माफ़ करना, मैं अपनी चिन्ता में था, तुम्हे पहचाना नहीं।

सेवाराम— तुमसे पन्द्रह वर्ष बाद मिला। ओह! कितने बदल गए हो, तब तो तुम सुन्दर, स्वस्थ बालक थे।

विनय०—हाँ भाई सेवाराम, कैसे बात करूँ, मैं तो हर्ष से पागल हो रहा हूँ। अभी-अभी तुम्हें याद कर रहा था। भाई आज-कल तुम क्या करते हो, कहाँ रहते हो, इतने दिनों से पत्र क्यों न डाला, पता क्यों न दिया?

सेवाराम—क्या पता देता? मेरा घर नहीं, द्वार नहीं, जहाँ ठहर गया, वहीं घर; जो काम किया, वही नौकरी और जो मिला, वही पारितोषिक।

विनय०—मैं तो समझता था कि सेवाराम किसी उच्च ओहदे पर होगा। तुम किसी बात में कम नहीं हो, भला इतना पढ़ कर तुमने क्या पाया?

सेवाराम—क्या पाया? (आश्चर्य से) मुझे पढ़ कर क्या मिला, क्या तुम नहीं जानते विनय कि—

जीवन के प्रांगण में हमने, क्या पाया, क्या खोया !
दो क्षण हँस लेना ही पाया, दो क्षण रो लेना खोया !!
हँसना, मानव का पावन कर्त्तव्य तथा रोना है पाप !
प्रेम धर्म है, हर्ष न्याय है; मौन व्यथा, रोना है श्राप !!
रोने मे हँसना, अनुभव करना ही जिसका होता धर्म !
इस विशाल जगती के उर का, उसने ही जाना है मर्म !!

विनय०—नही समझा भाई, तुम्हारे इस ललित स्वर की कठिन भाषा को नही समझा ।

सेवाराम—विनय ! यह कुछ भी कठिन नही है, मेरा कहने का तात्पर्य्य यह था कि तुम जीवन में सदा हर्ष का अनुभव करो, यदि रोना आवे, तो हँसो । यह देखो, चिड़ियाँ क्या कभी रोती है ? तुमने सूरज को उदास होते देखा या फूलों को आह भरते देखा है ? नही, यह सब दु खी है, सब सुखी है, परन्तु रोकर विपत्ति का स्वागत करना क्या अच्छा है ? कष्ट सब को सहना पड़ता है, परन्तु धैर्य्य से उसे सहो—

जीवन में विपत्तियाँ समझो, नैसर्गिक हैं सब वरदान ।
जिन में ही तो फँसकर होता, हमको बुरे भले का ज्ञान ॥
यदि जीवन सुखमय ही होता, सुख की होती कब पहचान ?
दुख ही मे तो सुख का अनुभव, छिपा हुआ है सच अनजान ॥

विनय०—ठीक है सेवाराम, यदि दुःख न होते, तो हम सुख को कैसे पहचानते, ? परन्तु—

सुख, दुख का जोड़ा है जग में, कभी दुखी है, कभी सुखी।
पर बहुतों को जीवन भर है, रहना पड़ता सदा दुखी॥

सेवाराम—यह उनका भ्रम है। जीवन में दुःख कैसा? यदि दुःख को सुख माना जाय, तो वह सुख है। सुख का मूल कारण है प्रेम, बस सारे विश्व को प्रेममय देखो, प्रत्येक प्राणी से प्रेम करो, प्रत्येक वस्तु में निज स्वरूप के दर्शन करो, फिर देखो तुम दुःख को कैसी शीघ्रता से भूलते हो।

विनय०—यह नुस्खा तुम स्वयं पर आज़मा चुके हो, मालूम होता है, तभी तुम मुझे भी उसकी सिफारिश कर रहे हो!

सेवाराम—तुम ग़लती पर हो भाई, क्या तुमने मुझे कभी दुःखी देखा। सदैव हँसते ही देखा होगा। घर की मुझे चिन्ता नहीं है, खाने का मुझे सोच नहीं है, जो मिलता है, खा लेता हूँ, नहीं मिलता तो कुछ चिन्ता नहीं करता।

विनय०—यह तुम्हारी भूल है। तुम्हें घर के सुख का अनुभव नहीं, तुम्हे पत्नी की परिचर्य्या का ज्ञान नहीं है, तुम्हे प्रेम का भान नहीं है।

सेवाराम—सम्भव है, परन्तु मेरा घर-बार तो सारे विश्व में विस्तृत है। फिर मुझे घर के सुख का अनुभव नहीं है, ऐसा क्यों कहते हो?

जहाँ ठहर जाता हूँ मैं, बन जाता वह सुन्दर स्थान।
वृहत नील आकाश तान देता है, सुन्दर वृहत वितान॥

पशु-पक्षी हैं स्वागत करते, वृक्ष बढ़ा देते छाया।
वन के कन्द मूल फल खाकर, सभी जानता हूँ पाया॥

(पंचवटी)

विनय०—नहीं यह तुम्हारा प्रकृति-प्रेम है, तुम मनुष्य-हृदय के प्रेम से परिचित नहीं हो।

सेवाराम—क्यों भाई क्यों! क्या तुम नहीं जानते कि प्रत्येक दीन, असहाय और सहायता का इच्छुक मेरी सेवा पर विश्वास कर सकता है—

नर, नारी, सारे इस जग के, मेरे हैं मैं उनका हूँ,
उनका दुःख सुख मेरा है, मैं सारा ही सब उनका हूँ।
दुख जिसको तुम कहते हो, वह है जीवन का यज्ञ महान,
प्रायश्चित जिसमें करते हैं, निज पापों का हम अनजान॥

विनय०—देखो, मैं तुम जैसा विद्वान तो नहीं हूँ कि, प्रत्येक बात में कोई तर्क निकालूँ। मेरे पास न वैसे भाव हैं और न वैसी भाषा, परन्तु ईश्वर ने हमको इसलिये जन्म दिया है कि, हम प्रत्येक सत्कर्म करते हुए धर्म का पालन करें।

सेवाराम—विनय, मैं नहीं जानता हूँ कि मैं तुम्हे अपने मत का बना लूँगा, पर मैं तो सेवा को ही कर्म मानता हूँ, प्रेम ही मेरा धर्म है। तुम प्रत्येक वस्तु से प्रेम करना सीखो, यहाँ तक कि रोग से भी प्रेम करो। जब तुम साधारण उद्वेग और भाव-प्रवाह से परे हो जाओगे, तभी तुम्हें सत्य-

मार्ग दीखेगा। तुमने जो ईश्वर कहा सो ईश्वर तो कोई वस्तु नहीं है। यदि ईश्वर होता, तो यह सम्भव नही कि, मनुष्य कुप्रवृत्ति की ओर आकर्पित हो जाता। ईश्वर यदि सचमुच कोई शक्ति है तो क्या कारण है कि हम उसे बार-बार भूल जाते हैं ? नहीं यह तुम्हारा मिथ्या विश्वास है। जो कुछ है सब प्रकृति है और प्रकृति का मूल मन्त्र है प्रेम, यदि तुम उचित मार्ग का अवलम्बन करना चाहो, तो वह प्रेम है।

विनय०—तुम्हारी बातें सुन कर मन को शान्ति मिलती है सेवाराम, परन्तु देखते हो, मेरी कैसी दशा हो गई है, मैं कितना दुर्बल हो गया हूँ ?

सेवाराम—जानता हूँ मित्र, मैं तुम्हें देख रहा हूँ, तुम स्वयं तुम्हारी बीमारी का कारण जानते हो, परन्तु दवाओं से कुछ न होगा, तुम हृदय का इलाज करो। स्वयं में एक शक्ति भरलो, विश्वास करो कि, तुम अच्छे हो, साथ ही अच्छे काम भी करो, बस तुम अच्छे हो जाओगे।

विनय०—सेवाराम, तुम में न जाने कौनसा जादू है कि, जो तुम ऐसी ऐसी बाते सोच लेते हो। क्या बताऊँ मैं तो तुमसे मिलते हो बहस करने लगा। भाई माफ़ करना, तुमसे कुछ खाने तक को न पूछा, परन्तु सेवाराम हम आज भी वही पुराने मित्र हैं। तुमने अपना तो हाल ही नहीं कहा।

सेवाराम—फिर बातें होंगी। हाँ, विनय, यह तो कहो श्रीमती कैसी मिली हैं ? मुझे तुम्हारे विवाह का समाचार तो मालूम हुआ था, परन्तु मैंने सम्मिलित होना ठीक नहीं समझा।

विनय०—क्यों भाई क्यो ?

सेवाराम—बताऊँगा भाई, परन्तु इस समय तो मुझे अब जाने की आज्ञा दो। तुम्हे मालूम होगा कि, यहाँ राष्ट्र-भाषा सम्मेलन हो रहा है, बस वहीं जाना है। इसी के कारण तो तुम्हारा पता लगा कि, तुम यहीं हो। तुम्हें भी तो निमन्त्रण मिला है। बस भाई तो चलता हूँ। (घडी देखकर) देखो समय हो चला।

विनय०—देखो, फिर शाम को यहीं आना।

सेवाराम—प्रयत्न करूँगा।

विनय०—नहीं, जरूर आना।

सेवाराम—अच्छा, तो चलता हूँ।

विनय०—कैसे कहूँ ?

(सेवाराम का प्रस्थान)

विनय०—(अकेला) सेवाराम का भी क्या ही जीवन है ! जैसा बचपन में था वैसा ही अब है। तब भी वह ऐसा ही स्वस्थ, सुन्दर व चतुर था, अब भी वैसा ही है। तब भी वह औरो के लिये पागल था, अब भी है। न उसके पास धन

है, न मकान, पर जैसे संसार का बादशाह हो। उसकी चाल में कैसी मस्ती भरी है। उसके स्वर में कैसा ओज है। मैं उसके सामने तुच्छ हूँ, सचमुच तुच्छ हूँ।

(तारा का प्रवेश)

तारा—क्या विचार कर रहे हैं प्राणनाथ? आज तो आप कुछ प्रसन्न मालूम होते हैं।

विनय०—हाँ प्रिये! अभी सेवाराम आया था, जिसकी प्रशंसा मैं तुमसे कई बार कर चुका हूँ।

तारा—तो उन्हें, ऐसे ही क्यों चला जाने दिया, जो कुछ होता आतिथ्य करते।

विनय०—वह नहीं ठहरा, चला गया। वैसा ही सनकी है, जैसा पहले था। अब कविता करना और सीख गया है।

तारा—अच्छा, अब जब वे आवें, तो भूलना मत। चलो खाना खालो, तैयार है।

विनय०—चलो।

(प्रस्थान)

दृश्य ८ अंक १

स्थान—तनसुखलाल का घर

स्टेजः—[तनसुखलाल का ११–१२ वर्ष का लडका प्रफुल्ल टहलता हुआ दिखाई देता है। सुन्दर व स्वस्थ है]।

प्रफुल्ल—(स्वगत) तीन चार दिन से ब्याह की बात सुन रहा हूँ। जिसके पास जाता हूँ, वही मुस्करा देता है, जैसे कि दुनिया भर का सब से बड़ा मूर्ख उनके पास जा पहुँचा हो। घर की दासियाँ, मुझे देख कर मुस्कराती हैं, मानो मैं कुछ समझता ही नहीं हूँ। क्रोध तो ऐसा आता है .. घर भर में बस यही बात हो रही है, जैसे कि ससार का इन्हें कोई काम ही नहीं हो।

पिताजी भी न जाने किस के डायरेक्टर बने हैं। बीस हजार रुपया दिया और मिला क्या, बस डायरेक्टर। और न जाने आज कल कौन कौन से ऊटपटाँग जमा हो जाते हैं। पहले तो वही थे मनहरी जिन्हें सब मनछुरी कहते हैं। अब एक उनके भी चचा आगये हैं, तिरविकड़म या तिगड़म ऐसा ही कुछ नाम है, बात बात में समझे ना, समझे ना कहते हैं, मानो और सबतो कुछ समझतेही न हों। शादी भी वे ही शायद तय करा रहे हैं। माना कि मुझे बहुत बढ़िया कपड़े बन जावेंगे, अच्छी अच्छी चीजे खाने को मिलेंगी और भी बहुत से लाड़ प्यार होंगे, पर उसके आगे कौन सँभालेगा। सुना है कि लडकी भी छठी में पढ़ती है और मै भी छठी में हूँ। शादी हो गई और वह आकर रहने लगी, फिर क्लास में

भरती हो गई और मुझसे निकली तेज, न भाई, न भाई, मै तो व्याह नही करूँगा । उसके सामने पिटना पड़े मास्टर से, नहीं कभी नही ... ।

(तनसुखलाल का प्रवेश)

तनसुखलाल—किसे मने कर रहा है रे प्रफुल्ल । यहाँ तो कोई नहीं है ।

प्रफुल्ल—(स्वतः) आगये हमारे पिताजी, अब ऊटपटाँग बातों का सिलसिला शुरू होता है । (प्रकट) जी हाँ पिताजी ।

तनसुख०—जी हाँ क्या, अपने आप ही बात कर रहा है, यहाँ तो कोई नहो है ।

प्रफुल्ल—कैसे पिताजी ? मै और आप दो तो यही हो गये और मैं तो उससे बाते कर रहा था ।

तनसुख०—किससे ?

प्रफुल्ल—उससे (छत की ओर अपने दोनो हाथ उठाता है)

तनसुख०—क्या छत से ?

प्रफुल्ल—(हँसकर) वाह पिताजी, वहाँ तो परमात्मा रहता है ।

तनसुख०—बडा चालाक हो गया है रे तू आज कल । अब समझ की बातें किया कर । देख कुछ दिनों बाद तेरा व्याह हो जायगा, सगाई तो आज कल मे आने वाली होगी ।

प्रफुल्ल—अच्छा पिताजी !

तनसुख०—बस, ऐसे ही आज्ञाकारी बनो, शाबाश ।

प्रफुल्ल—हाँ, मैं यह कह रहा था कि जहाँ से सगाई आरही है...... ।

तनसुख०—उनसे रुपये और माँगे ?

प्रफुल्ल—जी हाँ, यानी अगर आप ..... ।

तनसुख०—मैं क्या ?

प्रफुल्ल—उस लड़की से किसी और की सगाई करलें.. ।

तनसुख०—चुप पाजी । हे परमात्मा ! (हाथ ऊपर उठाता है) मेरे बालक की इतनी दुर्मति !

प्रफुल्ल—क्या छत से बातें कर रहे हैं, पिता जी ?

(विशम्भर, मनछुरी और भरोसे का प्रवेश)

तीनों—मुबारिक हो ।

तनसुख०—तुम्हें भी, आओ भाई, मालूम तो हो क्या ?

विशम्भर—आपके लड़के की शादी ।

भरोसे०—(अलग) और उसकी बरबादी ।

तनसुख०—क्यो, क्या और कोई पत्र आया ?

मनछुरी०—पत्र भी आया और सगाई भी आई ।

भरोसे०—(अलग) उसके गिरने के लिये खोदी है खाई ।

तनसुख०—परमात्मा को धन्यवाद-सिर में दर्द है। जाओ भाई, जलसे का इन्तजाम करो और जितने भी इष्ट-बन्धु तथा जाति वाले हैं, उन सबको बुलाओ ।

बिशम्भर—बहुत अच्छा।

मनछुरी०—परन्तु कुछ तो पहले ही से तैयार हैं, जलसे का प्रबन्ध कल करना चाहिये। आज तो हमी लोगों का मनोरञ्जन हो जावे। गाने वालियाँ आज तो आई होंगी?

बिशम्भर—(सेवक से) जाओ, नर्तकियों को बुलाओ। प्रफुल्ल बाबू की सगाई की ख़ुशी में कुछ गाना-नाचना होगा।

(नौकर का प्रस्थान)

(तमसुख से) सेठ जी, प्रफुल्ल बाबू का ऐसा विवाह करिये कि शहर याद रखे।

(नर्तकियो का प्रवेश)

[नर्तकियों का नाचना]

[प्रस्थान]

समाज की पुकार

अंक २

❀ दृश्यावली ❀

दृश्य—		स्थान—
१	..	चम्पा की बैठक
२	...	न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी का कार्यालय
३	...	विनयकुमार का घर
४	...	चम्पा की बैठक
५	..	तनसुखलाल का घर
६	...	कोतवाली
७	...	उद्यान
८	...	मनछुरीदास का घर
९	...	कोतवाली
१०	..	विनयकुमार का घर
११	...	न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी का कार्यालय
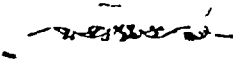
दृश्य १ अंक २

स्थान—नर्तकी की बैठक।

स्टेज—[एक बडी सी श्रीकृष्ण की तस्वीर कुर्सी पर रखी है, चम्पा हाथ जोड कर प्रार्थना कर रही है] ।

चम्पा०—मेरे मनमोहन, मुझे क्षमा करना । तुम्हे स्वर्ग लोक से उतार कर एक वेश्या के कमरे में ला बिठाया। कमरे में ही क्यो, उस वेश्या के हृदय में भी बिठा दिया? परन्तु तुम तो निर्लेप हो । तुम्हें पाप के पङ्क में भी डुबा दें, तब भी तुम वैसे ही उज्ज्वल रहोगे । तुम्हारे भक्त, तुम्हारे उच्च मानव मुझ से घृणा करते है, तुम्हारे पुजारी दिन भर तुम्हारी पूजा करके रात को मेरी भी पूजा करते हैं, परन्तु मैं तुम्हारी पूजा मन्दिर में नहीं कर सकती । न करने दो, मुझे धर्म पर न बढ़ने दो, पर मैंने तो तुम्हे पकड़ लिया है। तुम्हें छोड़ कर कही नहीं जा सकती—

माना बुराइयों से, सम्बन्ध था हमारा,
तन दे दिया किसी को, मन तो रहा तुम्हारा।
ठुकरा अगर जो दोगे, इसको भी मेरे मोहन !
तो नाम दीन-बन्धु, कैसे रहा तुम्हारा ?

श्रीकृष्ण ! क्या इसे भी ठुकरा दोगे । सुना है तुम बड़े दयालु थे। राम का रूप रख अहिल्या को तारा था। कृष्ण जब थे, तब द्रौपदी को उबारा था, पर उन सबका मन तुम्हारा था। बस यही हाल मेरा भी है।

(बन्ने, मौला का प्रवेश)

बन्ने—बाई जी, आज कै बजे चलना है, कौन-कौन से बाजे ले चलें ?

चम्पा०—मने करदो, मैं आज नहीं जा सकती। (गुनगुनाती है) 'मेरे तो गिरधर गुपाल दूसरा न कोई'।

(नेपथ्य में)

हट, हट, बच, कुचल गया'''मर गया, दौड़ो, बचाओ !

चम्पा०—मेरे तो गिरधर गुपाल—हैं, क्या शोर है बन्ने, मौला, जाओ, देखो तो क्या बात है? हाय, हाय, च्'''च्''' कोई आदमी तांगे के नीचे कुचल गया।

(बन्ने, मौला किसी व्यक्ति की मूर्छित देह को पलंग पर लाकर रख देते हैं)।

चम्पा०-(पास जाकर) हाय, हाय, बेचारे के बहुत चोट लगी—(चौंककर) हैं, यह सूरत तो जानी हुई मालूम होती है। (पास जाकर) ओह, हाय मोहन ! अब और क्या देखना बदा है ?

मौला—बाई जी, यह मन में क्या समाई है ?

चम्पा०-मैं बहन हूँ, यह भाई है। मुझ अभागी की प्रारब्ध में भाई का कष्ट देखना भी बदा था। (बन्ने, मौला से) बन्ने, मौला, जाओ और पास ही जो डाक्टर साहब रहते हैं, उन्हें बुला लाओ।

(बन्ने जाता है)

चम्पा०—निस्सन्देह यह मेरा भाई विनय है । इसकी कनपटी का दाग़ ही यह गवाही दे रहा है और यह कलाई पर ही गुदा हुआ है। हाय ! भाई, इस वेश्या बहन के सामने एक बार आँख तो खोलो ।

(डाक्टर का प्रवेश)

डाक्टर०—(रोगी को देख कर) कोई घबराने की बात नहीं है, मामूली मूर्छा है। इनके मुख पर पानी के छींटे दो।

(मौला पानी लाता है, चम्पा छींटे देती है)

चम्पा०—यह लीजिये फ़ीस डाक्टर साहब ।

(रुपये निकाल कर देती है)

डाक्टर०—नहीं, मैं इन्हें जानता हूँ. ये मेरे मित्र हैं इनसे मैं फिर फीस ले लूँगा।

(डाक्टर जाता है)

चम्पा०—(विनय की मूर्छित देह को झुक कर देखते हुए) खोलो भाई, आँखें खोलो ।

विनय०—(कराहता हुआ)—आह, मैं कहाँ हूँ !

चम्पा०—हे भगवान, कहाँ बताऊँ ?

विनय—(उठने का प्रयत्न करते हुए) अहह, मैं कहाँ हूँ ! अपने घर जाऊँगा ।

चम्पा०—उठो मत, लेटे रहो ।

विनय०—(उठ बैठता है) हैं. मै कहाँ हूँ, चोट तो अधिक नहीं लगी। यह किसका मकान है (चम्पा की ओर

देख कर) देवी, तुम कौन हो, जिसने मेरी सुश्रुषा की ? (चारों ओर देखता है) ऐसी देवी के यहाँ भी अश्लील तस्वीरें। जहाँ श्रीकृष्ण की तस्वीर हो वहाँ गन्दी तस्वीरें भी हों। यह किसका घर है ?

चम्पा०—भाई घृणा न करना यह एक वेश्या का घर है ।

विनय०—ओह वेश्या का । मैं एक क्षण भी नहीं ठहर सकता । (चलने का उपक्रम करता है) ।

चम्पा०—भाई... ।

विनय०—हे ठहरो, ठहरो यह यह आवाज़ तो पहचानी हुई सी मालूम होती है ।

(चम्पा दौड़ कर भाई से लिपट जाती है)

चम्पा०—भैया, मेरे छोटे भैया विनय, भूल गया !

विनय०—(स्तम्भित सा) वहिन, ललिता वहिन, मेरी मरी हुई ललिता वहिन । मैं सुपना देख रहा हूँ क्या ! शक्ति दो ईश्वर, शक्ति दो ।

(मूर्छित हो जाता है)

चम्पा०—हाय ! ललिता वहन, विनय को गोद में खिलाने वाली ललिता वहन तो मर गई, अब तो वह चम्पा नर्तकी है, जिस पर समाज थूकता है । स्त्रियाँ घृणा से देखती है, और भावी हँसती हैं ।

विनय०—(होश में आते हुए) क्या यह सम्भव है ? ललिता का पुनरुज्जीवित हो जाना सम्भव है ? वहन ! बोलो वहन !

चम्पा—भाई, मेरे भाई, एक वार फिर तो कहना। एक वार फिर बोलो "बहन"। (आवेश से) विनय एक वार मेरी ओर देखलो, एक वार उस प्रेम भरी दृष्टि से देखलो। मेरे तुतलाने वाले विनय, तुम्हारी बहन तुम्हारे पैरो के पास, तुम्हारी स्नेह-दृष्टि की भीख मांग रही है।

विनय०—(उठकर) मेरी ललिता बहन, तुम आज कुछ भी क्यो न हो, पर मेरी वैसी ही बहन हो। मैं सारे विश्व को ठुकरा कर तुम्हें प्रेम करूँगा। मेरी आत्मा कह रही है कि तुम निर्दोष हो, बतलाओ तो बहन, तुम मर कर जीवित कैसे हुईं?

चम्पा—(रोकर)

जीवित न है वहिन तुम्हारी, वह तो मर गई!
चम्पा है जीवित, ललिता तो विश्व तर गई!!

भाई, मेरे भाई, मुझ अभागिनी को मौत न आई। परन्तु तुम फ़िक्र न करना, कोई भी यह नही जानता है कि मैं तुम्हारी बहन हूँ।

विनय०—मैं आज सारे ससार मे ढोल पीट कर कह दूँगा कि मेरी बहन ललिता ज़िन्दा है।

चम्पा—भाई मेरे! तुम्हारी दया है, नही तो ..।

मेरे तो, गिरधर गुपाल, दूसरा न कोई....।

विनय—वहिन, इतनी निराश न हो।

चम्पा--भाई तुझे याद है,मैं तुझे कितना प्यार करती थी। तू जब छोटा सा था-मैं तुझसे तीन बरस बड़ी थी। तू अक्सर मुझसे लडा करता था। वे दिन अब भी वैसे ही याद हैं। भाई तुझे याद नही होगा जब तू केवल आठ बरस का था······ ।

विनय—जब तुम्हारी शादी हुई थी।

चम्पा—हाँ बरबादी हुई थी। मैं एक वृद्ध के संग बाँधी गई थी। हिन्दू धर्म तू क्षमा करना, मेरे मनमोहन तुम माफ़ करना। मैं पति के लिये बुरे शब्द उपयोग में ला रही हूँ। हाँ भाई; उस बुड्ढे के साथ शादी हुई जो क़ब्र में पैर लटकाये मौत के दिन गिन रहा था। मेरे वहाँ जाने के महीना भर बाद ही चल बसा।

विनय—पिताजी को बुद्धि मारी गई थी क्या ?

चम्पा--नहीं, उनकी बुद्धि पर ५०००) की थैली ने ताला लगा दिया था। विनय ! तब हम ग़रीब थे अब उन रुपयों की मदद से धनवान हो गये। चौंको मत विनय, तुम्हारे पिताजी यहाँ आ चुके हैं।

विनय--हे ईश्वर ! उन्हों ने तुम्हें पहचान लिया ?

चम्पा—नहीं। अच्छा हुआ।

विनय--तो बहिन तुम इस पाप के गड्ढे में कैसे गिर पड़ीं ?

चम्पा—सुनाऊँगी भाई सुनाऊँगी। छाती पर पत्थर रख कर सब सुनाऊँगी।

विनय०-बताओ बहन, वह पापात्मा कौन है जिसने तुम्हे पाप के गढ़े में ढकेला ?

चम्पा-बड़ा दुख देने वाली हैं, वे स्मृतियाँ। तो सुनो भाई, जिनसे मेरा विवाह हुआ था, उनके यहाँ एक दूर के भाई और रहते थे, त्रिविक्रमप्रसाद, पापी का नाम भी लेने में जवान लड़खड़ाती है। जब मै विधवा हो गई, तब मेरी अवस्था केवल चौदह वर्ष की थी। सारी सम्पत्ति मेरे ही नाम थी। उस दुष्ट ने मुझे बहकाया, धोखे से ऐसी विल कराई कि मेरी मृत्यु के पश्चात् सारी सम्पत्ति उसे ही मिले। उसी दुष्ट ने मुझे पतन का मार्ग दिखाया, अन्त में तीर्थ यात्रा के बहाने काशी लाकर छोड़ दिया। वहाँ से मैं बम्बई आई ··। भाई और सुनोगे ?

विनय०—बस बहन जब तक मैं उस पापी का पता न लगा लूँगा ·· ।

चम्पा-क्षमा करदो, उसके दोषों को क्षमा करदो, यदि तुम उसे माफ़ न करोगे तो परमात्मा फिर मुझे क्योंकर माफ करेगा ?

विनय०-धन्य है तुम्हारी क्षमा-परायण बुद्धि, तुम अब भी देवी हो, हिन्दूसमाज की रत्न हो।

चम्पा-लज्जित न करो भाई, यदि तुम्हे मुझ से कुछ प्रीति है, तो मेरे यहाँ का कुछ आतिथ्य स्वीकार करो। सब नृत्य की कमाई है और कुछ······नही।

विनय०-समझता हूँ। पर अभी तो जाना है, तुम्हारी भाभी को फिक्र हो रही होगी।

चम्पा-(हर्ष तथा विस्मयपूर्वक) अच्छा भाई! तुम्हारा विवाह हो गया, यह तो अच्छी ख़बर सुनाई। कभी मिलाना तो सही, पर मेरे ऐसे भाग्य कहाँ?

विनय०-चिन्ता न करो अब तुम इस हालत में अधिक देर न रहोगी, मैं आज ही कुछ और प्रबन्ध करूँगा।

चम्पा-शान्ति। विनय भैया धैर्य्य से काम लो, शीघ्रता न करना, कहीं ऐसा न हो कि मेरे कारण तुम्हें भी कष्ट भोगना पड़े?

विनय०-अच्छा बहन, आज्ञा दो। (चरण रज लेने को झुकता है, चम्पा रोकती है)।

[विनय० का प्रस्थान]

(चम्पा अकेली)

चम्पा-सुनी, बहुत दिनों बाद सुनी, मेरे नट नागर बहुत दिनों बाद सुनी। मेरा विनय भैया आगया। मेरे पिता जीवित हैं, मैं अब अधिक दिन इस पाप-गृह में नहीं रहूँगी। तुम्हारी लीला किस मुख से कहूँ, मेरे मन मोहन सिवा तुम्हारी प्रार्थना के क्या कर सकती हूँ?

(गाते हुए प्रस्थान)

मेरे मन मोहन, मोहन सुन्दर।
मेरे नट नागर, मोहन सुन्दर॥

(प्रस्थान)

दृश्य २ अंक २

स्थान—न्यू फ़ैशन इन्शोरेन्स कम्पनी का दफ्तर।

स्टेज—[इन्शोरेन्स कम्पनी का दफ्तर आधुनिक रीति से सजा हुआ, कुर्सी टेबिल इत्यादि]।

(मनछुरीदास का प्रवेश)

मनछुरी०-मर गये, मर गये, मनछुरीदास मर गये, मनछुरीदास कहने वाले मर गये,समझने वाले मर गये,देखें कौन पहचानता है, अब तो हम हैं मिस्टर M. C दास, न्यू फ़ैशन इन्शोरेन्स कम्पनी के मैनेजर। मैनेजर के लिये यह बगला मुफ्त है, रुपया आता है, उड़ाया जाता है। एक कार भी खरीद ली है। सेक्रेटरी है मिस्टर बी० लाल। यह कौन जानता है कि यह बिशम्भरलाल है और आर्गेनाइज़र हैं। मि० टी० प्रसाद जिनका काम आँख के अन्धे और गाँठ के पूरों की जिन्दगी व माल का बीमा करना है।

लेकिन धन्यवाद है, तनसुखलाल को और यारों की अक़्ल को, बीमे वाले उसका ही नाम तो देख कर पालिसी लेते है। दोस्त हो तो ऐसा, जैसा तनसुखलाल जिसने बीस हजार रुपये के हिस्से आँख मीच कर खरीद लिये हैं। वाह रे मै! लोग कहते है झूठ मत बोलो, फ़रेब न करो, मगर अन्धो, इस मनछुरीदास, नहीं, एम० सी० दास को देखो, जो तुम लोगो को बेवक़ूफ़ बनाकर मोटर की सैर करता फिरता है, बँगले में ठाठ से रहता है,बड़े-बड़े आदमियो

से हाथ मिलाता है और गुलछर्रे उड़ाता है हा, हा, हा (हँसता है, कहाँ के शास्त्र और कहाँ के पुराण? जो आँखों से दीखे वही प्रमाण।

(गाता है।

गुलछर्रे हमेशा उड़ायेंगे हम।
उल्लू औरों को ऐसा बनायेंगे हम॥
न पहले कभी थे, मुसीबत-ज़दा।
और होंगे कभी न, मुसीबत में हम॥
हमही हम, हम ही हम, हम ही हम, हम ही हम।
गुलछर्रे हमेशा उड़ायेंगे हम॥

(विशम्भर का प्रवेश)

विशम्भर०—और हम भी⋯ ⋯

(दोनों नाचते व गाते हैं)

गुलछर्रे हमेशा उड़ायेंगे हम—
हम ही हम, हम ही हम, हम ही हम, हम ही हम।

(चञ्चला का प्रवेश)

चञ्चला-यह क्या बेहूदा हरकत लगा रखी है? ये मैनेजरी के लच्छन हैं। कोई भलामानस आवे, तो यही कहे पागलख़ाने से छूट कर आये हैं।

(बिशम्भर और मनछुरी दोनों रुक जाते हैं।)

विशम्भर०—आइये, मिसेज एम० सी० दास । आप बेहद बिगड़ी हुई है, कुछ वजह भी तो हो।

चञ्चला वजह ? तुम वजह पूछते हो ? कम्पनी को बने दो महीने हो गये, इन दिनों में तुमने क्या किया ?

बिशम्भर०—आपको पूछने का अधिकार ?

चञ्चला—तुम्हारा इनकार ?

विशम्भर०—मैं सेक्रेटरी हूँ।

चञ्चला—मैं मैनेजरी हूँ।

विशम्भर०—(खिलखिला कर हँसता है)

हो, हो, हो अह, अब तो नई ग्रामर और डिक्शनरी बनेगी। मैनेजर की बीबी मैनेजरी, अ ह ह ह- अच्छा श्रीमती चञ्चलादेवीजी ! सुनो, दो महीने में भारत के ६० पत्रो में इस कम्पनी का विज्ञापन छप चुका है। दस हजार कलेन्डर बाँटे जा चुके हैं, तीन हजार ब्लौटिङ्ग पैड दे दिये गये हैं और भी सुनोगी ?

चञ्चला—जी हाँ, पर सब बीस हजार में से जो तनसुखलाल बिचारे से लिये हैं।

विशम्भर०—और नही तो क्या मै घर पर बनाता ?

मनछुरी०—और मैं चोरी करके लाता।

चञ्चला०—क्या और पालिसियाँ नही बनाईं ?

विशम्भर०—यह सब ऑर्गेनाइज़र साहब जानते हैं।

चञ्चला—कौन ?

विशम्भर० }
मनछुरी० } मिस्टर टी० प्रसाद

चञ्चला०,--वह शैतान

(तिगड़मप्रसाद का प्रवेश)

तिगड़म०—कौन शैतान, नमक हराम, बताओ मुझको उसके खींचूँ कान ।

चञ्चला }
मनछुरी० } आइये आप ।
विशम्भर० }

तिगड़म०—कहो कैसा रङ्ग रहा यहाँ ?

विशम्भर०—आप अपने राग तो कहिये ?

तिगड़म०—क्या कहूँ भाई ! मेरी कुछ ऐसी सूरत है कि बढ़िया से बढ़िया सूट पहिन कर समझेना, बदमाश नज़र आता हूँ । कई जगह तो पुलिस से मुठभेड हुई, पर (मूछों पर ताव देते हुए) वाह रे मैं, हर जगह सालों को नीचा दिखाया ।

सब—शाबाश ! शाबाश !

तिगड़म०—और सात सौ रुपया पैदा कर लाया ।

सब – शाबाश, शाबाश ।

चञ्चला—पर वे बीस हजार तो खतम होने आये और रुपया पैदा करने की तरकीब ·· ····· ।

तिगड़म०—रुपया पैदा करने की तरकीब ?

सब—जी हाँ · · ·· ।

तिगड़म०—देखो भाई, तुमने तो मुझे चक्कर में डाल दिया है, मैं नहीं जानता तुम लोगों ने बीस हजार कैसे खर्च कर डाले। ख़ैर जो कुछ बचा है वह मुझे दे दो, तो मैं और तरकीब निकालूँ, समझे ना।

विशम्भर०—ठीक है भाई, ऐसा ही होगा।

तिगड़म०—अच्छा तो अब ऐसा हो कि पाँच सौ रुपये महीने के हिन्दुस्तान भर में हर जगह चीफ़ एजेन्ट बनाये जावें।

सब—है और रुपया, तनख़्वाह कैसे दोगे ?

तिगड़म०—सब से ५०० रुपये की नक़द जमानत ली जायें।

सब—और।

तिगड़म०—फिर देखा जायगा, तनख़्वाह देते वक्त देखा जायगा, समझे ना।

सब—शाबाश शाबाश, ठीक तो है देखा जावेगा।

तिगड़म०—समझे ना।

विशम्भर०—बस, बस, इसी खुशी में चलो सिनेमा देख आवें।

सब—चलो।

(सबका प्रस्थान)

(पर्दे के पीछे से भरोसेलाल निकलता है)

भरोसेलाल—पा लिया, सब भेद पा लिया। जाता हूँ, इसकी सूचना खुफिया पुलिस को दूँगा।

(प्रस्थान)

दृश्य ३ अंक २

स्थान—विनयकुमार का मकान।

स्टेज—(विनय बैठा हुआ है। सेवाराम का प्रवेश)

विनय०—आओ भाई सेवाराम। आज तो मैं तुम्हें बहुत प्रसन्न देख रहा हूँ। बोलो कुछ खुशख़बरी सुनाओ।

सेवा०—हाँ, आज तो मेरे पास बहुत बड़ी खबर है। तुमने तो सुना होगा, पढ़ा भी होगा तीन चार दिनों से असेम्बली में जोरदार बहस हो रही थी, वह आज पास होगया। यह देखो, अख़बार रहा।

विनय०—मैं भी तुम्हें खुशखबरी सुनाऊँ, यह देखो।
(चिट्ठी निकाल कर देता है)

सेवाराम—क्या है ?

विनय०—पढ़ो समझ जाओगे।

सेवाराम—(पढ़ कर) हैं, प्रफुल्ल का विवाह है, वह तो तुमसे शायद छोटा है। कितना बडा होगा ?

विनय०—ग्यारह-बारह वर्ष का है।

सेवाराम—११-१२ वर्ष का, और उसका विवाह। विनय तुम्हें क्या हो गया है, क्या तुम भी इससे सहमत हो ?

विनय०—हाँ भाई, पिताजी का पत्र आया बोलो कब चलोगे ?

सेवाराम—विवाह में शरीक होने के लिये ?

विनय०—और फिर किस लिए ?

सेवाराम—विनय तुम इस विवाह को रोको। तुम रोक सकते हो, तुम सोच रहे हो कि पिताजी क्या कहेंगे, समाज क्या कहेगा, परन्तु तुम अपने हृदय से पूछो क्या इतनी अल्पायु के बालक विवाह जैसे महान् यज्ञ का महत्व समझते हैं। विनय तुम सोच लो।

विनय०—परन्तु मैं क्या कर सकता हूँ ?

सेवाराम—तुम क्या कर सकते हो ! क्यों, तुम क्या नहीं कर सकते हो ? क्या तुम्हें प्रफुल्ल से प्रेम नहीं है, क्या तुम प्रफुल्ल के प्रफुल्ल-वदन को स्नेह दृष्टि से नहीं देखते, कैसी तुम इस बात को नहीं सोचते कि कुछ दिनों बाद उसकी कैसी दशा होगी ? क्या तुम्हे देश जाति से प्रेम नहीं है ? विनय, बुरा मत मानना, आज देशको दुर्बलों की आवश्यकता नहीं है।

विनय०—मैं कुछ समझता हूँ, पर....।

सेवाराम—पर वर कुछ नहीं। तुम्हें, मैं जैसा कहूँ करना होगा, क्या तुम प्रफुल्ल को भी दूसरा विनय बनाना चाहते हो ? क्या तुम प्रफुल्ल को भी तुम जैसा ही दुर्बल, पीला और रुग्ण बनाना चाहते हो ? क्या तुम्हें भाई से प्रेम नहीं है ? यदि तुम इस काम में सहयोग दोगे, तो मैं असहयोग करूँगा-तुम आज के समाज की ओर दृष्टि डालो, हमारे देश के सौ व्यक्तियों में से औसतन नव्वे अस्वस्थ हैं। वे पहले से आर्य्य कहाँ गये, वे योद्धा कहाँ गये, मुझ से पूछो,

मैं बताऊँगा। बाल-विवाह, अशिक्षा और अनमेल विवाहों ने हमारे देश को दरिद्र कर दिया है। बोलो विनय, बोलो, कुछ बोलो।

विनय०—क्या कहूँ भाई, मैं इस विवाह को कैसे रोकूँ? मैं भी इस गलती को कुछ समझने लगा हूँ, और उस गलती की सजीव मूर्ति मैं तुम्हारे सामने खड़ा हूँ। पर प्रश्न यह है कि मेरा कहना पिताजी मान नहीं सकते।

सेवा०—तुम उन्हें विवश कर सकते हो।

विनय०—कैसे?

सेवा०—(अख़बार पटक कर)

ऐसे, जैसे मैंने, तुमसे आते ही कहा। आज ही तो बाल-विवाह-निरोधक बिल पास हुआ है। विवाह में अभी दिन हैं, तुम अर्ज़ी दो। विवाह रुकवाने को अर्जी मैं भी दे सकता हूँ, पर यदि तुम यह काम करोगे, तो भारत के युवकों के सामने एक आदर्श रख सकोगे।

तुम्हारी समाज में प्रतिष्ठित स्थिति है, तुम्हें देख कर और भी बहुत से व्यक्ति अनुमोदन करेंगे। अच्छा सोच लो, इस बात को ख़ूब सोच लो। इस समय मैं जा रहा हूँ, परन्तु तुम कुछ निश्चय करलो ताकि जब मैं शाम को मिलूँ तब तुम मुझे कोई निश्चयात्मक उत्तर दे सको।

(जाता है)

विनय०—(अकेला)

जादू की सी आवाज वाला गया। परमात्मा ने इसकी वाणी में कैसी शक्ति दी है, इसकी काया कैसी पुष्ट बनाई है। इसके हृदय में कैसा प्रेम भरा है! जो जिससे दो बातें कर लेता है, वह इसके कहने में हो जाता है। मुझ पर भी मानो जादू कर दिया है। मुझे पिताजी का विरोध करना होगा, हाँ यदि मुझे मेरे भाई से प्रेम है तो पिता का विरोध करना होगा! जाऊँ, यह ख़बर तारा को सुनाऊँ।

(विनय का प्रस्थान)
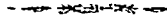
दृश्य ४ अंक २

स्थान—चम्पा नर्तकी का घर

चम्पा—(अकेली)

भाई को गये चार पाँच दिन हो गये, परन्तु उन्होंने ख़बर नहीं ली। न जाने उनकी तबियत कैसी है और क्या मालूम वे मुझे भूल ही गये हों। जिस अभागिनी का सदा कष्टों से सम्बन्ध रहा है, उसे सुख क्यों कर मिल सकता है। सच है, दुःख में कौन किसकी सहायता करता है?

(बन्ने का प्रवेश)

बन्ने—बाईजी, आप से मिलने के लिये कोई भली स्त्री आई हैं।

चम्पा—मुझसे मिलने के लिये? फिर से पूछो कहीं रास्ता तो नहीं भूल गईं?

बन्ने०—जी हाँ, पहले मैं भी यही समझा था। पर वे तो आपका ही पता बताती है।

चम्पा—अच्छा जा बुला ला।

(बन्ने का प्रस्थान)

चम्पा—(स्वतः) मुझसे मिलने के लिये एक भली स्त्री आई है। इस "भली" की चोट मैं खूब समझ गई। बन्ने यह तुम्हारा कुसूर नहीं, मेरी क़िस्मत का कुसूर है।

(बन्ने का तारा के साथ प्रवेश)

तारा—नमस्ते बहिन।

चम्पा—नमस्ते मेरी बहिन- आओ, बैठो, पर देखो, यह एक नर्तकी का घर है, तुम किसी और से मिलने आई हो ?

तारा—नहीं, यहाँ एक चम्पा बहन रहती है, बस उन्हीं से।

चम्पा—वह तो मैं ही हूँ। मुझ अभागिनी ने तुम्हें पहचाना नहीं, माफ़ करना, बोलो मैं सब तरह तुम्हारी सेवा में हूँ।

तारा—केवल तुम जैसी देवी के दर्शनार्थ ही चली आई, तुम मुझे नहीं जानती हो, पर मैं तुम्हें जानती हूँ।

चम्पा—किसी गृहस्थ स्त्री से मिले मुझे वर्षों हो गये। तुम मेरा मज़ाक उड़ाने तो नहीं आई हो? मैं जानती हूँ कि मैं तुमसे हर बात में कम हूँ, पर जो कुछ हूँ, वैसी हूँ।

तारा—मजाक ? नहीं, नहीं, मै सच्चे हृदय से तुमसे प्रेम करती हूँ, उस दिन मेरे स्वामी घायल होकर ·· ··।

चम्पा०—समझी, तू, विनय, मेरे भैया विनय की पत्नी है। (शीघ्रता से, प्रेमपूर्वक तारा का हाथ पकड़ लेती है) मनमोहन, मैं तुम्हारी कैसे प्रार्थना करूँ। अहा हा! जैसा मेरा भाई है, वैसी ही तू भी है।

तारा—(गद्‌गद् होकर) अब तुम्हें यहाँ नहीं रहने दूँगी।

चम्पा—मैं तेरी दासी होकर भी प्रसन्नता से रहूँगी। माफ़ करना मैं इस समय सभ्यता से बात करना भूले जा रही हूँ। तुम बहन बड़ी दयालु हो, हाँ तो बहन, जैसे जी में आये वैसा करो। मै तो हर्ष से पागल हुई जा रही हूँ। मेरे मोहन सम्भालो।

पागल खुशी से न बन जाऊँ मै।
सम्भालो, सम्भालो, मुझे मेरे मोहन ॥
मुझे क्या पता था, तुम्हारा हृदय।
है इतना दया-मय, सदा मेरे मोहन ॥

तारा—(स्वगत) जिसके हृदय में परमात्मा के प्रति इतनी भक्ति हो, जो केवल परिस्थितियों से विवश होकर कोई नीच कार्य्य करे, उससे हम घृणा क्यों करें। इस समाज की सैकड़ों स्त्रियों से जिसके हृदय में, दया, प्रेम, और उच्च भावना अधिक विद्यमान है, उस देवी को प्रणाम है।

चम्पा—यह भी मेरा पागलपन है। बहिन ! तुम हँसोगी कि एक वेश्या, महायोगी श्रीकृष्ण से प्रेम करती है, पर क्या करूँ, जब सब ओर से निराश होगई तो मनमोहन से ही लौ लगाई।

तारा०—धन्य हो बहन, तुम्हारा सा हृदय मेरा भी होता !

चम्पा—मुझे अधिक न शर्माओ ।

तारा—नहीं बहन, यह झूठ नहीं है । तुम जैसी महान आत्माओं का स्थान तो पवित्र आश्रम है । चलना, आज मेरे साथ मन्दिर चलना ।

चम्पा—अच्छा, परन्तु मुझे मन्दिर में कोई क्यों घुसने देगा ?

तारा—मेरे साथ हो, कोई कुछ न कहेगा ।

चम्पा—तो कपड़े पहिनूँ ?

तारा—चलो, मैं भी चलूँ । आज मैं स्वयं तुम्हें कपड़े पहिनाऊँगी ।

(प्रस्थान)
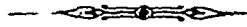
दृश्य ५ अंक २

स्थान—तनसुखलाल का घर

स्टेज—(तनसुखलाल, भरोसेलाल, विशम्भर इत्यादि)

(नर्तकियो का गाना)

कमलन दलपर भौंरा गूँजत, छवि कैसी सरसाई।
देख देख सखि, काली काली, घोर घटा घिर आई॥
तड़ित कड़क कर चमकत नभमे, शोभा बरनि न जाई।
कमलन दल पर.................................।

विशम्भरलाल—परमात्मा का धन्यवाद है कि आज उसकी कृपा से, न्यू फैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी के डायरेक्टर, दानवीर, माननीय, श्रीमान सेठ तनसुखलाल के छोटे पुत्र श्री प्रफुल्ल का विवाह इतनी होनहार अवस्था में, कानपुर के सेठ, श्री फ़क़ीरचन्द की सुकन्या श्री प्रेमलता से होना निश्चित हुआ है। हर्ष का विषय है कि सेठ साहब इस अवसर पर बहुत सा दान भी देंगे।

मनछुरी०—मैं इस अवसर पर हार्दिक बधाई देता हूँ।

भरोसेलाल—और मै इस अवसर पर जब कि बालक प्रफुल्ल को अन्धकार के गढ़े में डाला जा रहा है...।

सब०—हैं अन्धकार-गढ़ा! क्या कहा?

भरोसे०—जी हाँ, अन्धकार-गढ़ा।

तनसुख०—बस, मित्रता का बदला हो चुका। अब तुम मित्र नहीं हो। तुमने हर स्थान पर मेरी बुराई की, और इतने सज्जनों के सामने मेरा अपमान किया। मैं, यह कहने की आवश्यकता नहीं समझता कि तुम्हे हाथ पकड़ कर निकलवाऊँ, तुम सीधी तरह से स्वयं चले जाओ।

भरोसे०—मित्र तनसुखलाल जी!

तनसुख०—बस, चले जाओ, एक शब्द भी नहीं।

भरोसे०—जाता हूँ मित्र, परन्तु याद रखना।

सब—बस चले जाओ, शर्म भी तो नहीं आती।

भरोसे०—तुम्हारा दोष नहीं है।

(गाता हुआ जाता है)

नहीं काम देती है बुद्धि, जब आते हैं दिवस-खराब।
पतन गर्त में गिरजाता है, आँख मीच मानव तब आप॥
रावण को भी सीता के हरने में, कब सूझा था काल?
इसीलिए है आज बना, तनसुख का शत्रु भरोसेलाल॥
विदा, मित्र अलविदा मित्रता, हो निराश मैं चलता हूँ।
सुखी तथा सानन्द रहो, बस यही कामना करता हूँ॥

(जाता है)

विशम्भर०—कम्बख्त, भले मौक़े पर अपना मनहूस राग छोड़ ही गया।

तनसुख०—हाँ भाई! सर में दर्द होने लगा।

दृश्य ६ अंक २

स्थान---कोतवाली [Police Station]

स्टेजः—[थानेदार कुर्सी पर बैठा है, पास ही मुन्शी ज़मीन पर बैठा काम कर रहा है दो पुलिस वाले दरवाजे के पास खड़े हैं] ।

मुन्शी०—इस मिसिल का क्या करूँ साहब ?

थानेदार—फाड़ दो ।

मुन्शी०-(स्वगत) शराब रङ्ग ला रही है । (प्रकट) यह तो बहुत ज़रूरी है, कल तो इसका मुक़दमा शुरू होगा ।

थानेदार--जो जी में आये, सो करो—

(एक पुलिस वाले का प्रवेश)

पुलिस वाला—हुज़ूर,कुछ आदमी बाहर खड़े हैं,आपसे मिलना चाहते हैं ।

थानेदार--आने दो ।

(सिपाही जाता है)

(कुछ व्यक्तियों का प्रवेश)

थानेदार--कहिये, आप लोगों ने क्यों तकलीफ़ की ?

एक व्यक्ति--यहाँ, न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी… ।

थानेदार--बीमा नहीं होता ।

वही व्यक्ति--जी नहो--

थानेदार---रुपया नहीं देते ?

कई व्यक्ति--जी नहीं, वे तो ' ' ।

थानेदार--(कुछ क्रोध से) फिर यह भी नहीं, वह भी नहीं, तो है क्या ?

एक व्यक्ति--जनाब, उस कंपनी के मैनेजर ने पाँच सौ रुपये महीने पर नौकर रखा ।

थानेदान-सिर्फ आपको ?

कई व्यक्ति-जी नहीं, हम सबको ।

थानेदार-आप एक ही शहर के हैं ?

एक व्यक्ति-मैं मदरास से आया हूँ ।

दूसरा०-मैं कराची से आया हूँ ।

तीसरा०-मैं कलकत्ते से आया हूँ ।

थानेदार—आप सब साहब, इङ्गलेंड रिटर्नड् है ?

एक०-जी नहीं, मैंन जूनियर मिडल सेकन्ड क्लास में····· ।

थानेदार--···आप किसी यूनिवर्सिटी के डाक्टर हैं--

एक०—जी नहीं ।

थानेदार—फिर आपको पाँच सौ रुपये देना उसने कैसे स्वीकार कर लिया ? बहुत से एम० ए० तीस-तीस रुपट्टी पर मारे-मारे फिरते हैं, और बहुत से बी० ए० कान्स्टेब्ली के उम्मीदवार है, फिर आपको ५००) रुपये महीने वे कैसे देने को तैयार हो गये ?

दो, तीन, व्यक्ति--(एक साथ) रुपये कहाँ दिये, यही तो शिकायत है ?

एक व्यक्ति--और पाँच सौ रुपये ज़मानत के भी जमा किये थे।

थानेदार--आप लोगों को सोचना चाहिये था कि पाँच सौ रुपये आज कल किसके पास फ़ालतू रखे हैं ? ख़ैर हमारा फ़र्ज़ है, वह हम करेंगे। आप में से किस-किस को धोखा दिया गया है ?

सब--सबको, सबको !

थानेदार--(मुन्शी से) न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी का मैनेजर कौन है ?

मुन्शी--उसके मैनेजर तो शायद एम० सी० दास हैं, साहब।

थानेदार-एम० सी० दास ! यह तो क्या नाम है, अच्छा.........समझा, शायद वही हो। (आगन्तुकों से) आप लोग जाइये; मैं उचित कार्यवाही करूँगा।

(सब आगन्तुकों का प्रस्थान)

थानेदार-(मुन्शी से) देखता हूँ, इस हलके में भी बीमारी फैलने लगी है। क्यों जी, इसी कम्पनी में तो मेरा भी बीमा हुआ है ?

मुन्शी-जी हाँ, दो हज़ार का हुआ है, मुफ्त।

थानेदार-ऐसा मुफ्त कैसा, न जाने किस दिन कम्पनी फ़ेल हो जावे। ख़ैर इसकी पूरी तरह से तहक़ीक़ात करनी होगी।

मुन्शी-बशर्ते कि, आप बोतल की देवी को तिलांजलि दे दें।

थानेदार-छूटेगी, मैं छोड़ने की कोशिश करूँगा। शराब और नौकरी का साथ नहीं चलेगा। अच्छा तो आप खुफ़िया तौर से उस कम्पनी की जाँच कराइये।

मुन्शी-जैसा आप का हुक्म होगा, किया जायगा।

(सिपाही का प्रवेश)

सिपाही-हुजूर, आज मौक़े की जाँच का हुकुम दिया था।

थानेदार-हाँ, चलो! साथ में सात आदमी रहेंगे।

सिपाही-जो हुक्म सरकार!

(प्रस्थान)

दृश्य ७ अंक २

स्थान— एक उद्यान

सेवाराम (स्वगत) सब चक्कर है। सारा जगत चक्कर है। रात दिन चक्कर है, आदमी चक्कर है, । मैं भी चक्कर हूँ, सब चक्कर हैं। कुछ समझ में आता नहीं, इस संसार की माया को कैसे समझें ? मैंने अपना जीवन प्रेम के आदर्श को समझाने में बिताया, अपना शरीर मनुष्य जाति की सेवा में लगा दिया, परन्तु तिस पर भी मैं आज तक ऐसा एक भी व्यक्ति न बना सका, जो सर्वसद्गुण-सम्पन्न हो, जिसकी रग-रग में सेवा का आदर्श भरा हो। सब ओर वैसा ही दुराचार है, वैसा ही अन्धकार है। आँखें खोल कर देखो, मनुष्य एक एक रोटी के टुकड़ो के लिये,कुत्तों की तरह से लड़ रहे हैं ? बहुत से लाखों रुपिये दबाये बैठे हैं, हजारों भूखे मर रहे हैं, सेकड़ों ने चोरी का व्यवसाय स्वीकार कर लिया है। चार आने पैसे में लोग ईमान और कुरान बेच आते हैं। जिस दिन मैंने होश सँभाला, उस दिन भी वही हालत थी, आज भी वही है। सब चक्कर है और जो इस चक्कर में पड़े, वह घनचक्कर है।

मैं जिससे बात करता हूँ, वह स्वार्थ की परिपूर्ति में लगा हुआ दृष्टिगोचर होता है। ऐसा एक भी व्यक्ति नही दिखाई देता, जो दूसरों के स्वत्वों का भी विचार करता हो। कुछ समझ में नहीं आता, सब चक्कर है।

मैं औरों को क्या दोष दूॅ, मेरे ही पैर में चक्कर है। पिछले सात दिनों में कई शहरों में चक्कर लगा आया। यह

हाल है मेरे जीवन का। अवश्य कहीं कमी है, मेरे सेवा भाव में कमी होगी।

जिसके पाने को मैंने, त्याग दिया धन, जन, घर–बार !
इतने वर्षों में भी वह, उतना ही रहा दूर हर बार ॥
वही करुण-क्रन्दन दीनों का ! वही निर्बलों की आहें।
वही अपव्यय धनिकों का है, वही पीड़ितों की आहें ॥
मानव ! तू मानव से कब, सीखेगा करना सच्चा प्रेम ?
कब जगती के वक्ष-स्थल पर, सब जीवित होंगे सक्षेम ?

क्या यह असम्भव है ? नहीं. असम्भव तो कुछ भी नहीं है। सब पीड़ा, दुःख, हमारे धर्म–भाव के नाश होने से होते हैं।

मुसलिम जिसको मजहब कहते, हिन्दू जिसको कहते धर्म,
सब झूठे हैं, पागलपन हैं, सच्चा धर्म सदा है कर्म।
जिसने अपने कर्त्तव्यों को, ठीक रीति से है पहिचाना.
सत्य धर्म के, सत्य मर्म को, निश्चय, उसने ही है जाना।

(भरोसेलाल का चुपचाप प्रवेश, परन्तु सेवाराम उसे नहीं देखता है)

निस्सन्देह, कर्म ही तो हमारा धर्म है, फिर सब कर्म को ही क्यों नहीं मानते ? यह आपस का वैर-भाव क्यों ? सच्चा कर्म, हत्यायें नहीं सिखलाता।

सच कहना, क्या मज़हब कहता, एक दूसरे को तुम मारो
एक खुदा के सब बेटे, फिर लड़ते रहते, क्यो तुम यारो?
और धर्म क्या सिखलाता, दीनों पर करना अत्याचार,
अपना पेट सदा भरना, करना न किसी का कभी विचार?

धर्म एक दूसरे को मारना नहीं बताता, परन्तु हम धर्म भूल गये। तो क्या अब मुझे धर्म की शिक्षा देनी होगी? नही, मैं ही धार्मिक होने का दम नहीं भर सकता। प्रत्येक मनुष्य अपना धर्म जानता है, उसकी आत्मा का कथन ही उसका धर्म है, कमी है साहस की। उनमें इतना साहस नहीं कि वे समाज की कड़ी ग्रन्थियों को काट कर अपनी आत्मा की आवाज के अनुसार कार्य्य करें। आवश्यकता इस बात की है कि आज सभी अन्ध विश्वास की जड़ खोद दी जावे। यह एक व्यक्ति के बस की बात नहीं, इसके लिए तो सभी को बढ़ना होगा।

फिर वही, चक्कर है, सब चक्कर है और जो इस चक्कर में पड़े वह घनचक्कर है। ओफ़, ओ, इस चक्कर में पड़ कर मैं यहाँ का काम तो भूले ही जा रहा था। विनय भी आते होंगे, पर प्रश्न यह है, मैं ठहरूँगा कहाँ?

भरोसेलाल—(स्वग.) यह सौम्य मूर्ति कोई नई मालूम होती है। इसके सिर पर लम्बे लम्बे केश कैसे सुन्दर लगते हैं। अवश्य, यह या तो कोई कवि है, अन्यथा कोई दिव्य मूर्ति। देखूँ, परिचय प्राप्त करने का प्रयत्न करूँ।

सेवाराम—बस यही प्रश्न है कि ठहरा कहाँ जावे?

भरोसेलाल—(आगे बढ़ कर) क्षमा करें। मैं आपका नाम जान सकता हूँ ?

सेवाराम—(एक ओर को देखता हुआ) मेरा नाम ?

जगह, जगह, बस भटकना, बिना लिये कुछ काम।
इससे, उससे बोलना, कहते "सेवाराम"॥

भरोसेलाल—(स्वगत) वाह क्या शब्द है, मानो कानों में ललित राग पड गया हो। पर यह व्यक्ति महात्मा सेवाराम तो नहीं है, जिनका नाम आजकल हर जगह सुनाई दे रहा है, कहीं सुधारक सेवाराम यही तो नहीं है। (प्रकट) बम्बई से महात्मा सेवाराम यहाँ आने वाले थे, आप उनसे परिचित तो नहीं हैं ?

सेवाराम—मैं, महात्मा सेवाराम को तो नहीं जानता, परन्तु सेवाराम मेरा भी नाम है और मैं भी बम्बई से आरहा हूँ।

भरोसे०—(स्वगत) ज़रूर कुछ दाल में काला है। हो न हो यह वही व्यक्ति है। परन्तु ...... महात्मा सेवाराम मेरे सहपाठी रह चुके है, देखें तब का जिक्र छेड़ूं, यदि वही हुए तो पहिचान जाएँगे। (प्रकट)

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि मै आपसे मिला। आपको देखकर, मुझे मेरे एक सहपाठी की याद आ गई। हम, वे साथ पढ़ा करते थे। गाँव की पाठशाला थी, एक लड़के के पास जूते नही थे, उसे उसने अपने जूते दे दिये। किसी के पास कोट फटा था, अपना कोट दे दिया। बस उसका यही हाल था।

सेवाराम—बस अब न कहो, मैंने तुम्हें पहचान लिया। तुम्हारा नाम भरोसेलाल है ?

भरोसे०—मैंने भी पहचान लिया। महात्मा सेवाराम मेरा मित्र है और वह तुम हो।

सेवाराम—निस्सन्देह, तुम्हारा मित्र मैं ही हूँ, पर महात्मा नहीं हूँ। मैं आज तक कुछ न कर सका, पर अब यदि तुम सहायता दो········।

भरोसे०—मैं स्वयं आपकी सहायता चाहता हूँ।

सेवाराम—मैं तैयार हूँ।

भरोसे०—यहाँ एक प्रसिद्ध धनिक के ग्यारह बरस के पुत्र का विवाह·········।

सेवाराम—तनसुखलाल तो नहीं ?

भरोसे०—जी हाँ, बस वही।

सेवाराम—(प्रसन्न होकर) बस तो हो गया काम। हम एक दूसरे की सहायता द्वारा इस विवाह को रोकेंगे।

भरोसे०—मैं हर तरह से आपकी सेवा में हूँ।

सेवा०—धन्यवाद, तुम्हें समय पर लड़के की सच्ची अवस्था बतानी होगी। न्यायालय में भी कहना होगा, पर यह तो बताओ कि क्या तुम तनसुखलाल को जानते हो ?

भरोसे०—मैं उनके गहरे मित्रों में से हूँ और अपनी आँखों से उनका अनिष्ट कभी नहीं देख सकता। सेवारामजी-

मित्र ही यदि मित्र का भला न कर सका ।
धिक्कार है उस मित्र को, वह कुछ न कर सका ॥

सेवाराम--तुम्हारा आदर्श बहुत अच्छा है । मित्र का कर्त्तव्य है कि वह मित्र का अनिष्ट न होने दे। उसे मित्र से सच्चे हृदय से प्रेम करना चाहिए, इसी प्रेम में वह एक और भी उज्ज्वल ज्योति देखेगा, जो उसे सांसारिक बन्धनों से, सामाजिक रूढ़ियों से ऊपर उठा देगी और फिर उसका हृदय गाँव, घर और देश की चहारदीवारी में बन्द न रह कर विश्व के कल्याण के लिए उत्कण्ठित हो जाएगा। उसकी मित्रता के दायरे में सारा विश्व समा जाएगा और फिर अपने कर्मों में, वह मनुष्य होने के अनुपम वरदान को अनुभव करेगा। भरोसेलाल अपना यही धम है कि-

मानव हो, मानव की सेवा में, अपना तन अर्पण करदो ।
मन के मैलेपन को धोकर, सेवा से मन दर्पण करदो ॥
फिर तुम जग में देखोगे, सब ओर प्रेम का नव-विस्तार ।
सुख, समृद्धि के जल-प्रवाह में, तैरेगा समस्त संसार ॥

भरोसेलाल—सच कहते हो मेरे मित्र, महात्मा ! आज से मैं तुम्हारे संदेश को संसार में फैलाने का कार्य करूँगा। तुम सच मानो, सहस्रों व्यक्ति आज इस लिए तैयार बैठे है कि वे किसी ऐसे मार्ग का अवलम्बन करें, जो उन्हे मानसिक शान्ति प्रदान करे। अब तक कमी यही रही है कि लोगों

को अच्छे पथ-प्रदर्शक नहीं मिले। निस्सन्देह तुम में एक सद्ध महात्मा के सब लक्षण हैं।

सेवाराम—मुझे यों न बढ़ाओ, तुम्हें उपदेश देने की कोई आवश्यकता नही, जो तुम दूसरों से कहना चाहते हो, वह स्वयं पर करके दिखाओ। लोग देखेंगे और समझेंगे। उपदेश का समय गया, अब कार्य्य का समय है ?

भरोसेलाल—बहुत अच्छा, जैसा तुम कहोगे, करूँगा। अब घर चलो, कब तक यहाँ खड़े रहोगे।

सेवाराम—अभी तो मुझे स्टेशन जाना है। विनय कदाचित् इस ट्रेन से आ रहा होगा। समय हो चला।

भरोसेलाल—मैं भी आपके साथ स्टेशन चलता हूँ।

सेवाराम—चलो।

(प्रस्थान)

दृश्य ८ अंक २

स्थान—मनछुरीदास का मकान।

स्टेज—

मनछुरीदास—(स्वगत) वाह रे मैं और मेरी अक्ल। थोड़ी तिगड़म की और थोड़ी बिशम्भर की, और यदि श्रीमान् चञ्चलादेवी जी सुन रही हों, तो थोड़ी उनकी भी। (टहलता हुआ) अपने मुख से तारीफ़ करना फ़िजूल है पर रहा नहीं जाता। हमारा नाम इतिहासो में अमर रहेगा। एक व्यक्ति ने हिन्दुस्तान भर के व्यक्तियो का दिमाग़ क़ाबू में कर रखा है। (हँसता है) अभी तक चालीस व्यक्तियो को रुपया दिया गया, जो हम ही सब भिन्न-भिन्न नामो में थे। अभी कम्पनी बने थोड़ा ही अर्सा हुआ है, परन्तु इतने ही दिनो में बीसियों सार्टीफ़िकेट प्राप्त कर लिये यानी बना लिए। तिगड़म भी बहुत होशियार है कि जिसने पचास पालिसियाँ बनाईं और तरकीब ऐसी रखी है कि किसी को कभी मालूम हो न हो और जब मालूम भी हुआ, तब हम न जाने किन होटलो में, कहाँ, किन नामो से मौज कर रहे होंगे। यह सब धन्यवाद मुझे मिलना चाहिए।

(गाता है)

प्याले मय के हमेशा पिये जायँगे।
उल्लू सीधा हमेशा किये जायँगे॥

हमें मत सुनाना, पुराण औ कुरान।
हम तो रुपया बस, यूँही लिये जायेंगे॥
पिये जायेंगे, मय पिये जायँगे।
रुपया औरों से, यूँही लिये जायँगे॥

[बिशम्भर का प्रवेश]

बिशम्भर०—आज तो यार मनछुरी बहुत ख़ुश मालूम होते हो, क्या ख़बर है?

मनछुरी०—तुमने मुझे रञ्जीदा कब देखा? मैं तो हमेशा ही ऐसा रहता हूँ। तुम्हें मालूम नहीं है कि जब विधाता ने मुझे बनाया, तो मैंने उससे पहले ही यह लिखा लिया था......।

बिशम्भर०—क्या?

मनछुरी०—"ऐश ऐसे हमेशा उड़ायेंगे हम"।

बिशम्भर०—बस बहुत हो गया। तुम तो गाने में ही मस्त रहते हो, यहाँ तरह-तरह की मुसीबतें झेल कर लोगों की जान का बीमा करते हैं।

मनछुरी०—तो हम कौन सा आराम करते हैं? तुम समझ नहीं सकते कि, भलाआदमी बनने में कितनी कठिनाइयाँ पैदा होती हैं?–उस दिन कलक्टर साहब को दी जाने वाली फ़ेअरवेल पार्टी में गया, तुम जानते हो कि अँग्रेज़ी मामूली आती है—लोगों ने कहा कि आप भी

कुछ बोले, जनाब मैंने उसी वक्त मुँह में छाले होने का बहाना बना दिया। वह तो अच्छा हुआ कि किसी ने यह न पूछा कि मै नमक-मिर्च की चटपटी चीजें कैसे खा गया ? अगर कोई पूछता तो बोलो, रहती न आफ़त !

बिशम्भर०—रहने भी दो, यूँ ही, बातें बनाया करते हो।

मनछुरी०—मत मानो । कल की ही बात है, बाहर लगे हुए आलीशान साइन बोर्ड को देख कर एक अमरीकन टूरिस्ट अन्दर घुस आया।

बिशम्भर०—अच्छा ?

मनछुरी०—उस वक्त मैं बड़ी होशियारी से झाड़ू लगाने लगा।

बिशम्भर०—उसके झाड़ू लगाने लगे।

मनछुरी०—सिर तुम्हारा, भाई मैं नौकर बना, नौकर ! मैंने फुर्ती से जवाब दिया, Sir, the manager not here, on leave on of account holiday sickness.

बिशम्भर०—वाह रे मेरे शेर ! ऐसी अँग्रेज़ी की टाँग तोड़कर तो तुम ज़रूर किसी दिन भण्डा फोड कराओगे। अगर गाँठ की न हो, तो किसी से उधार ही माँग लो।

मनछुरी०—बस, अक्लमन्द तो आप ही हैं, आप ही कुछ सुनाइये, आपने क्या नूर बरसाये ?

बिशम्भर०—सब मैं ही कर रहा हूँ। उस दिन की बात है, मैं आगरे से आ रहा था, फ़र्स्ट क्लास में एक

अँग्रेज़ सफ़र कर रहा था। मैं भी शान से सर्वैन्ट क्लास में बैठ गया ......।

मनछुरी०—तो तुमने धोखा दिया ?

विशम्भर०—वही जो आप करते हैं-पर सुनो, तो रास्ते में एक टी० टी० ई० ने चेक किया, मैं बोला कि मैं साहब के साथ हूँ। पर वह कम्बख़्त मेरे बिना जाने हुए अछनेरा उतर गया। अब मैं भी चक्कर में पड़ा, जब किसी और स्टेशन पर टी० टी० ई० मेरे पास आया। उसने हाथ पकड़ कर उतार लिया और पुलिस इन्सपेक्टर के पास ले चला। जेब में एक दस रुपये का नोट और चौदह आने पैसे पड़े थे। इन्सपेक्टर ने मुझ से पूछा कि क्या तुम धोखे से सर्वैन्ट क्लास में चल रहे थे ? मैंने कहा जी हाँ।

मनछुरी०--यह तो बड़ी बेवकूफ़ी की।

विशम्भर०---अक़ल घिसो म्याँ, छुरी पर। इन्सपेक्टर मुझसे कहने लगा कि, धोखादेही में तुम्हारा चालान किया जायगा। मैं भी भोला बन कर कहने लगा-अच्छा, मैं इन्हें दो आने और दिये देता हूँ। इन्सपेक्टर मेरा मुँह ताकने लगा। मैं बोला कि इन्हीं बाबूजी ने तो मुझसे कहा था क सर्वैन्ट क्लास में बैठ जाओ। एक रुपया ठहरा था, मेरे पास चौदह आने ही निकले। दो आने पैसों के लिये आपके पास ले आये। मैं अभी दिये देता हूँ......।

मनछुरी०-शाबाश, शाबाश ! खूब फाँसा !!

विशम्भर०-वहाँ से फिर मैं मिठाई खाकर आया।

मनछुरी०-बहुत अच्छे, शाबाश, हम लोग हमेशा इसी तरह मौज करेंगे। अभी क्या हुआ है, अभी तो अच्छे अच्छों को उल्लू बनाएँगे।—आओ इसी बात पर एक गाना हो जाय-

मनछुरी }
विशम्भर } *मौज ऐसी हमेशा करे जायँगे।*

(तिगड्म का प्रवेश)

तिगड्म०-"*जेलख़ाने की आप अब हवा खायँगे*"।

विशम्भर०-आओ, यार तिगड्म—

मनछुरी०-हम लोग तुम्हारी ही याद कर रहे थे।

तिगड्म०-जी हाँ, अब तो याद करोगे ही, जब जेल जाने की तैयारियाँ कर रहे हो—

विशम्भर०-कैसी मनहूस बातें कर रहा है यार ! हम को जेल भेजने वाले तो अभी जन्मे भी नहीं होंगे।

तिगडम०-यह तो नहीं जानता, पर वही दुष्ट भरोसेलाल उन एजेन्टों से मिल गया है, सम्भव है कि अब कुछ तूफान-समझे ना-उठे। अब किसी तरह भरोसेलाल को डरा धमका कर काम निकालना चाहिये।

मनछुरी०-परन्तु बिल्ली के गले में घण्टी कौन बाँधेगा ? भला सोचो तो वह यहाँ आयेगा क्यों ? और जब तक वह यहाँ न आवे, कार्य्य लगभग असम्भव सा है।

विशम्भर०-लेकिन यह तो हो सकता है, सचमुच हमारी क़िस्मत ज़बरदस्त है। आज ही तो मैंने उससे वायदा किया था कि मैं कोर्ट में तनसुखलाल के लड़के की सच्ची उम्र बता दूँगा। इसीलिये आज शाम को वह यहाँ आएगा।

तिगड़म०-अब-समझे ना-शाम होने में कितनी देर है? बस आता ही होगा।

मनछुरी०-वाह भाई, तो पौबारह हैं, इसमें शक नहीं कि हमें गिरफ्तार करने वाले अभी नहीं जन्मे हैं।

विशम्भर०-देखो किसी के पैरों की आहट सुनाई दे रही है, होशियार हो जाओ।

मनछुरी०-क्या करना होगा?

तिगड़म०-आते ही—समझे ना—धर दबोचना। विशम्भर उसके मुँह में कपड़ा ठूंस देगा! फिर उसे-······समझे ना ········।

मनछुरी०-मैं देख लूँगा।

(तीनों छिप जाते हैं)

(भरोसेलाल का प्रवेश)

(भरोसेलाल के घुसते ही, तीनों उस पर टूट पड़ते हैं, कुछ देर लड़ कर भरोसे बेहोश हो जाता है)

बिशम्भर०-बस हो गया काम, ' अब तीन दिन में मकान आदि बेच कर रफूचक्कर हो जाँयगे। तब तक शादी भी हो चुकेगी।

मनछुरी०-यह तो ठीक नहीं होगा, अगर यह जिन्दा रहा, तो जरूर आफ़त ढायेगा।

विशम्भर०-तो······

मनछुरी०-ख़तम कर दें इसे।

विशम्भर०-हत्या,हत्या! नहीं, नहीं, मैं इस में सहयोग नहीं दे सकता।

मनछुरी०-अच्छा जैसे जी में आये, वह करो।

तिगड़म०-कोई बात नहीं, समझे ना, सब ठीक हो जाएगा। बोलो इसी बात पर-"महाराजा दुर्योधन की जय!!"

मनछुरी०-सिनेमा चलो यारो, इसमें क्या धरा है?

(प्रस्थान)
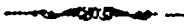
दृश्य १   अंक २

स्थान—कोतवाली ।

स्टेज—थानेदार बैठा हुआ लिख रहा है, पास ही मुन्शी बैठा है, एक छोटी सी आलमारी रखी है।

थानेदार—(लिखे हुए काग़ज़ पर स्याही चट्ट लगाता हुआ) लीजिये मुंशी जी, आप बहुत दिनों से कह रहे थे, इसलिये मैंने शराब छोड़ दी ।

मुन्शी—बहुत अच्छा किया आपने । मैंने तो यह देखिये (दाढ़ी पर हाथ फेरता है) दाढ़ी सफ़ेद करली । मैं कोई आपको बुरी सलाह नहीं दे सकता । आपने शराब छोड़ दी, अब आप देखेंगे कि आप दिन दूनी, रात चौगुनी तरक्की करते हैं ।

(सिपाही का प्रवेश)

सिपाही—हुजूर, कोई बाहर खड़ा हुआ है । आप से मिलना चाहता है ।

थानेदार—अन्दर आने दो ।

(आगन्तुक का प्रवेश)

थानेदार—कहिये, आप भी किसी बीमा कम्पनी के सिलसिले में आये हैं ?

आगन्तुक—जी नहीं, मैं श्रीभरोसेलाल का पड़ोसी हूँ । कल शाम से वे ग़ायब हैं । उनकी पत्नी बहुत चिन्तित हैं । घर में कोहराम मचा हुआ है ।

थानेदार—जाने के पहिले वे कुछ कह कर गये थे ?

आगन्तुक--कह गये थे कि, मैं न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी के दफ्तर में जा रहा हूँ। वहाँ भी गया था, पर वे लोग कहते है कि वे वहाँ गये ही नही।

थानेदार—अच्छा, आप अपना व भरोसेलाल का पूरा पता लिखा कर जाइये, और मैं उनका जल्दी से जल्दी पता लगाने की कोशिश करूँगा।

(आगन्तुक का प्रस्थान)

थानेदार—(मुन्शी से) मुन्शी, मुझे इस एम० सी० दास और न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी पर शुरू से ही शुब्हा रहा है। कल से दो शिकायत भी आ चुकी है। ख़बर लगी है कि, एक आदमी, जो अपने को टी० विक्रम बतलाता है, यहां आया है, कही यह त्रिविक्रम न हो। वह एक नामी डकैत था। कुछ वर्षों से उसका कुछ हाल मालूम नही हुआ। अभी कुछ दिनो से ही ऐसी वारदाते शुरू हो गई है। टी० परशाद नाम का कोई आदमी इस कम्पनी का ऑर्गेनाइज़र भी है। हो सकता है टी० विक्रम और टी० परशाद भी एक ही शख़्स हो। त्रिविक्रम पर एक धनी बनिये की हत्या का भी अभियोग है। पुलिस कई वर्षों से इसके लिये सिर पटकती फिर रही है।

मुन्शी--तो एक बार उस ऑफ़िस की तलाशी क्यो न ले ली जाए?

थानेदार—हाँ, लेकिन बहुत होशियारी से जाना होगा, सम्भव है, वे सशस्त्र हों।

मुन्शी—तो हम वेश बदल कर चलें न! एजेन्ट बनने के लिये या बीमा कराने के लिये चलें और वहीं गिरफ्तार करलें।

थानेदार—लेकिन, यह काम जल्दी होना चाहिए। आज दोपहर बाद ही धावा बोला जाएगा। अभी तो सिपाहियो को छुट्टी दे दो और लगभग दस व्यक्ति तैयार रहें।

मुन्शी—जैसी आज्ञा।

(प्रस्थान)

दृश्य १०   अंक २

स्थान—विनयकुमार का मकान।

(विनयकुमार अकेला बैठा हुआ है।)

(शारदा का प्रवेश)

तारा—आज उदास कैसे बैठे है प्राणनाथ !

विनय०—नही तो, उदास तो नही हूँ।

तारा—फिर मुख की तेज-श्री विलीन सी क्यो हो रही है ?

विनय०—हाँ तारा, नही, हॉ मै सोच रहा हूँ, मैं सोच रहा हूँ कि, मैं पिताजी का विरोध करूँ या नही ?

तारा—इसमे सोचने की क्या बात है ? तुम्हे प्रफुल्ल का विचार करना चाहिए। तुम्हे उचित और अनुचित समझना चाहिए। वे तुम्हारे मित्र सेवाराम कहाँ गये ?

विनय०—उसी की तो यह आग लगाई हुई है, वह कहता है कि, प्रफुल्ल का विवाह अभी मत करो। तुम पिता के विरुद्ध केस लड़ो। भला सोचो तो, यह कैसे हो सकता है ?

तारा—बहुत सी बाते जो असम्भव सी प्रतीत होती हैं, अन्त में सम्भव लगने लगती है। किसने सोचा

था कि, राम चौदह वर्ष बन में रहने के बाद राज्य भोग सकेंगे। यह कौन विश्वास कर सकता था कि, वीर प्रताप मुट्ठी भर आदमियों के साथ मुग़ल सम्राट की सेनाओं का सफलतापूर्वक सामना कर सकेंगे। इसलिये मैं तो यह समझती हूँ कि जिसके लिये तुम्हारी आत्मा गवाही दे, वस वही करो।

विनय०—समझो तो तारा, यदि मैंने विवाह रुकवा दिया, तो लोग क्या कहेंगे ? सारा ससार मुझ पर थूकेगा। मैं समाज के बन्धनों में बँधा हुआ हूँ, मुझे साहस ही नहीं कि मै ऐसा करूँ।

तारा—यदि आप सच्चे मन से ऐसा विश्वास करते हैं कि, विवाह रुकवाना अन्याय होगा, तो निस्सन्देह आपको ऐसा नहीं करना चाहिए।

विनय०—नहीं, मेरा तो विश्वास है कि, अभी शादी होना ठीक नहीं।

तारा—यदि ऐसा है, तो आपको अवश्य वही करना चाहिए, जैसी सेवाराम सलाह दें। याद रखिए, मनुष्य समाज द्वारा नहीं बना, समाज मनुष्यों से बना है।

विनय०—धन्य हो तारा ! तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मैं अब अवश्य इस विवाह को रोकने का प्रयत्न करूँगा ?

तारा—सेवाराम ने अर्ज़ी तो दे दी होगी। कब की तारीख़ है ?

विनय०—(स्तम्भित सा) ओह! यह तो भूल ही गया था। तारीख तो कल की ही है, हाँ कल की ही है। अरे,तब तो मैं ... किस ट्रेन से जाऊँगा ? मैं तो जा ही नहीं सकता। कोई ट्रेन मुझे कल १० बजे दिल्ली नहीं पहुँचा सकती और कोई ट्रेन भी तो अब नहीं है। हे ईश्वर! मैं सेवाराम की दृष्टि में धोखेबाज साबित होऊँगा।

तारा—क्या और किसी प्रकार नहीं पहुँच सकते ?

विनय०—कैसे जा सकता हूँ ?

तारा—वायुयान से।

विनय०—हाँ, ख़ूब याद दिलाई तारा। मैं हवाई जहाज से पहुँच सकता हूँ। अब तुम मेरा सामान बँधवाओ। एक छोटा सा बिस्तरा और सूटकेस काफ़ी होगे। धन्यवाद है तारा तुम्हें। तुम जैसी पत्नी सबको मिले।

तारा--बस अब कवि न बनें। अब तो आप चलने की तैयारी कीजिये।

विनय०--मैं अभी जाकर नहा लेता हूँ। तुम सब तैयार रखना।

तारा--आप नहा कर आइये—

(दोनो का प्रस्थान)
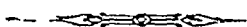
दृश्य ११ अंक २

स्थान—न्यू फ़ैशन इन्शोरेन्स कम्पनी का ऑफ़िस ।

स्टेज—[मनछुरी, चञ्चला, बिशम्भर और तिगडम बैठे हैं]

बिशम्भर०—तिगड़म का कहना झूठा था। मैंने उसी दिन कहा था कि, कोई हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता है। थानेदार को मैं जानता हूँ। सी० आई० डी० वाले सब मेरे आदमी है। चाहूँ तो वाइसराय को भी एक बार मेरा कहना मानना पड़े।

चञ्चला—अच्छा अब आप अधिक शेख़ी न बघारिये। पहिले यह बताओ कि, उस आदमी का क्या करोगे?

बिशम्भर०—भरोसेलाल! उसे तो मनछुरी ठिकाने लगायेंगे।

मनछुरी०—माफ़ करो दादा! अब तो साहस जवाब दे रहा है। मेरी राय में तो अब कारबार ख़तम करो और कहीं दूसरी जगह धूनी जमायेंगे।

तिगडम०—मैं तो समझता हूँ, समझे ना, कि भरोसे-लाल को फुसला कर अपने दल में मिलाया जाए। पहले यह कहो, समझे ना-कि रुपया कितना है और मकान बेच कर कितना और मिल सकता है?

चञ्चला—रुपया तो अब बिलकुल नहीं है।

तिगडम०--हैं! क्या कहा? यह नहीं हो सकेगा, समझे ना सब का हिस्सा लगेगा।

(दरवाज़े पर साँकल की खटखट सुनाई देती है)।

मनछुरी०--आगई पुलिस, मैं तो छिपता हूँ।

(कोच के नीचे घुस जाता है)

बिशम्भर०--मैं अन्दर जाता हूँ, क्योंकि पुलिस वाले सब मुझे पहचानते हैं।

(अन्दर भाग जाता है)

चञ्चला--लँहँगे पहन लो। तुम लोगों से तो मैं ही अच्छी हूँ कि, बाहर के आदमी से बातें तो कर लेती हूँ।

मनछुरी०-- (कोच के नीचे से सिर निकाल कर) नहीं, नहीं, तुम्हारा खान्दानी पति मैं मौजूद हूँ, बाहर के आदमी के साथ भागने की जरूरत नहीं है।

(द्वार पर खट खट)

चञ्चला--मर कम्बख्त। (तिगडम से) तुम्हें तो डर नहीं लगता है। जाओ, दरवाजा खोलो, देखो कौन है?

(द्वार पर जोर की खट खट)

तिगड़म०--कौन साहब हैं? खोलता हूँ।

(तिगडम जाता है तथा एक भद्र आगन्तुक को लेकर आता है)

आगन्तुक--क्या न्यू फ़ैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी का यही ऑफिस है?

चञ्चला—जी हाँ, हम लोग क्या सेवा कर सकते है?

आगन्तुक--क्या मैनेजर साहब नहीं है?

तिगड़म०--नहीं, (विशम्भर निकल आता है) है। वे आगये।

विशम्भर०—(कुर्सी पर बैठते हुए) फर्माइये।

आगन्तुक--मैं अपनी जान का बीमा कराना चाहता हूँ, आपकी क्या टर्म्स है?

(मनछुरी कोच के नीचे से निकलता है, कपडे धूल में लथपथ है)।

आगन्तुक--यह कौन है?

तिगड़म०—यह नौकर है, ऐसा शुबह हुआ था ... ।

आगन्तुक--कोई आदमी खो गया है?

विशम्भर०—अँयँ... ।

आगन्तुक--मेरा तात्पर्य यह था कि क्या कुछ खो गया था?

चञ्चला-जी हाँ, मेरी नेकलेस खो गई है, वही तो यह ढूंढ रहा था।

(एक और व्यक्ति का प्रवेश)

विशम्भर०--आइये!

दू० आगन्तुक—क्या न्यू फैशन इन्श्योरेन्स कम्पनी का यही ऑफिस है?

विशम्भर०--जी हॉ, कहिए!

(मनछुरी की ओर खेदपूर्ण दृष्टि से देखता है)

दू० आगन्तुक—मैंने हिन्दुस्तान टाइम्स में आपकी कम्पनी का विज्ञापन पढ़ा था। आपको प्रत्येक प्रान्त के लिये कुछ ऑर्गेनाइजर चाहिएँ ?

बिशम्भर०—जी हाँ, उसकी कुछ शर्तें है। यह देखिये, (एक छोटी सी पुस्तिका देता है)।

दू० आगन्तुक—देखी है, मैं तो जमानत तक साथ लाया हूँ। गिन लीजिये पूरे पाँच सौ।

(नोटों का बन्डल मेज पर रखता है)।

तिगडम०—(बिशम्भर से) लेकिन आप किस प्रान्त की मैनेजरी दे देंगे ? इन्हें कल प्रार्थना-पत्र लेकर आने दीजिये ।

पहला आगन्तुक—यह काम तो अभी होगा।

दू० आगन्तुक—उसे मुक्त करने का ?

तिगड्म०—किसे ?

(दोनों आगन्तुक रिवॉल्वर निकाल लेते हैं, पहला सीटी बजाता है, सब दरवाजों मे पुलिस वाले दिखाई देते हैं)

पहला आगन्तुक—भरोसेलाल को।

(चंचला और मनछुरी तमञ्चा निकालने का प्रयत्न करते है)

दू० आगन्तुक—बस, ख़बरदार ! हाथ ऊपर करो।

(बिशम्भर तमञ्चा चलाता है, एक पुलिस वाला घायल होकर गिर पड़ता है, तिगडम नौ-दो-ग्यारह हो जाता है)

(एक सिपाही हाँफता हुआ आता है)

सिपाही—हुज़ूर, इनमें का एक आदमी खिड़की में से कूद कर भाग गया। मैंने उसे रोका था, पर उसने गोली चला कर मुझे गिरा दिया। यह देखिये पिंडली में से आर पार हो गई है।

पहला आगन्तुक—उसका पीछा करो। बेवकूफ़ो, उसे ही तो पकड़ना था। (दूसरे आगन्तुक से) मुन्शीजी, विक्रम तो भाग गया और हमारे सब प्रयत्न बेकार रहे।

दूसरा आगन्तुक—अब औरों को तो सँभालिये, (सिपाही से) इन्हें हथकड़ी पहिना दो।

(सिपाही हथकड़ी पहिनाते हैं, चञ्चला छूटने का प्रबल प्रयत्न करती है। बिशम्भर और मनछुरी के हथकड़ियाँ डाल दी जाती है)

पहला आगन्तुक-शाबाश! तुम सबको इनाम मिलेगा। इन्हें थाने पर ले जाओ।

(सिपाही क़ैदियों को घसीटते ले चलते हैं, चञ्चला छूटने का प्रयत्न कर रही है। पर्दा धीरे धीरे गिरता है)।

समाज की पुकार

अंक — ३

दृश्यावली ।

दृश्य	स्थान
दृश्य १	अदालत
दृश्य २	सड़क
दृश्य ३	विवाह मण्डप
दृश्य ४	सेवा-मन्दिर
दृश्य ५	फकीरचन्द का घर
दृश्य ६	जेलखाना
दृश्य ७	अज्ञात (नट-नटी)
दृश्य ८	समाज सुधार सभा

दृश्य १ अंक ३

स्थान–अदालत

स्टेजः—(सेवाराम कोर्ट के अहाते में टहल रहा है ।)

सेवाराम—(स्वत.) धोखा दिया ! विनय सरीखे बचपन के साथी ने धोखा दिया । कल सन्ध्या की ट्रेन से नहीं आया, रात की ट्रेन से नहीं आया, यहाँ तक कि प्रातःकाल की ट्रेन से भी नहीं आया और मेरा कार्य्य विफल हो गया । मैं भी चुप हूँ ।

(मॅजिस्ट्रेट इत्यादि, इतनी देर तक आपस में धीरे धीरे बोलते दिखाई देते है) ।

मुन्शी—(चपरासी से) देखो, सेवाराम हाजिर है ?

(चपरासी सेवाराम की ओर बढता है)

चपरासी—(जोर से) सेवाराम हाजिर है ?

सेवाराम—जी ।

चपरासी—सेवाराम हाजिर है ?

सेवाराम—जी ।

चपरासी—सेवाराम हाजिर है ?

सेवाराम—नहीं, क्या तुम्हें सुनाई नहीं देता है ?

चपरासी—मुझे तो तीन दफा आवाज लगानी है, आप हाजिर हों या न हो ।

(सेवाराम गवाहों के कटघरे मे खडा हो जाता है)

मॅजिस्ट्रेट—बोलो, गङ्गा माता की क़सम खाकर, सच कहोगे ?

सेवाराम—सच कहूँगा।

पब्लिक प्रॉसीक्यूटर--वादी का कथन है कि सेठ तनसुखलाल अपने लड़के की शादी कानपुर के सेठ फ़क़ीरचंद की लड़की से कर रहा है, परन्तु दोनों की उम्र आवश्यक अवस्था से बहुत कम है, इस लिये वादी अदालत की आज्ञा द्वारा शारदा एक्ट के अनुसार विवाह रुकवाना चाहता है।

मॅजिस्ट्रेट—(सेवाराम से) तुम्हारी प्रतिवादी से दुश्मनी तो नहीं है ?

सेवाराम--जी नहीं, मेरी किसी से दुश्मनी नहीं है।

मॅजिस्ट्रेट--तुम्हारे पास इस बात का क्या सुबूत है कि लड़के की उम्र बारह वर्ष से कम है ?

सेवाराम--जी, आप स्वयं उसे देख सकते हैं, उसकी डाक्टरी परीक्षा हो सकती है।

मॅजिस्ट्रेट--अच्छा जा सकते हो।

(मुन्शी से) और गवाहों को बुलाओ।

मुन्शी—(चपरासी से) भरोसेलाल को बुलाओ।

चपरासी--भरोसेलाल हाज़िर है ? भरोसेलाल हाज़िर है ? भरोसेलाल हाज़िर है।

(अन्दर आकर) हुज़ूर, भरोसेलाल ग़ैरहाज़िर है।

सबइन्सपैक्टर पुलिस—भरोसेलाल को कल ही बदमाशो के चगुल से छुड़ाया गया है, वह बहुत दुर्बल है और आने में असमर्थ है।

मॅजिस्ट्रेट--दूसरे गवाह को बुलाओ।

मुन्शी--(चपरासी से) देखो विशम्भरदास हाजिर है ?

चपरासी--(तीन बार ज़ोर से चिल्लाता है) बिशम्भरदास हाजिर है ? (अन्दर आकर) हुजूर वह भी ग़ैर हाजिर है।

मॅजिस्ट्रेट—फिर कोई गवाह हाजिर भी है या नहीं ?

मुन्शी--(चपरासी से) देख तो विनयकुमार है।

(एक भद्र व्यक्ति का दौडते हुए प्रवेश)

आगन्तुक—हवाई जहाज़ ने भी अब पहुँचाया। क्या पता पेशी होगई हो।

चपरासी--विनयकुमार हाजिर है (तीन बार चिल्लाता है)

भद्र व्यक्ति--हाँ, हाजिर हूँ, चलो।

(विनयकुमार गवाहों के कठघरे मे खडा हो जाता है। शपथ के बाद)।

विनयकुमार—मैं प्रतिवादी का लडका हूँ और प्रफुल्ल मेरा सगा भाई है। मैं केवल उसके उपकार की भावना से प्रेरित होकर अदालत से प्रार्थना करता हूँ कि उसका विवाह रुकवा दिया जाये।

मॅजिस्ट्रेट--क्या तुम कोई प्रमाण-पत्र पेश कर सकते हो ?

विनयकुमार--क्षमा कीजियेगा, उसके जन्मोत्सव पर आप स्वयं मौजूद थे।

मॅजिस्ट्रेट--मैं प्रमाण चाहता हूँ।

विनय०--(जेब मे से एक जन्म-पत्री निकालते हुए) यह लीजिए। यहीं के प्रसिद्ध ज्योतिषी मनोहरनाथ शास्त्री ने बनाई है।

मॅजिस्ट्रेट--अच्छा, मुझे सन्तोष होगया। आज्ञा दी जाती है कि तनसुखलाल विवाह रोक दे। यदि उसने ऐसा नही किया, तो बलपूर्वक विवाह रोका जाएगा।

सीन २ अंक ३

स्थान—सड़क

सेवाराम—अब मैं हिमालय श्रृङ्ग पर जाकर शान्ति का आराधन करूँगा। मैंने अपना सारा जीवन सेवा के आदर्श को दिखलाते बिताया, परन्तु मनुष्यों ने मेरी बातो पर ध्यान नही दिया। अवश्य, या तो मुझ में कुछ बुराई है, अन्यथा मेरे आदर्श में कोई कमी है। नही नही ऐसे जीवन से तो मर जाना अच्छा है, पेट भरना तथा आवश्यक प्राकृतिक कार्य्य तो पशु भी करते है। यदि मनुष्य भी, पेट भरना, तथा वंश बढ़ाना ही अपना एक मात्र कार्य्य समझ बठे तो वह मनुष्य क्या हुआ। त्याग, दया, क्षमा आदि गुण ही तो उसे पशु की श्रेणी से ऊपर उठा देते हैं। परन्तु परन्तु, मनुष्य क्या पशु ही रहना अधिक पसन्द करते है यदि नहीं तो वे अब तक सेवा-मार्ग पर क्यों न बढ़े ? अवश्य कही कोई कमी है।

यह सब मेरा ही दोष है, मुझ में इतनी योग्यता नहीं। हमारे पूर्वज वर्षों वन में तपस्या करते थे, तब कही जाकर उन्हें पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता था। मै भी इस वेश को अब तिलांजलि दे दूँगा। एक कोपीन बाँध कर वन में तपस्या करूँगा। विनय जैसे मित्रो ने धोखा देकर सिखला दिया कि ससार में कोई किसी का नही है, सब धोखा है, चक्कर है।

अय प्रपञ्ची संसार, धोखे की टट्टी और माया का जाल ! तुझे आखिरी प्रणाम है ॥

(कुरता फाड़ देता है और पागलों की तरह मत्त होकर गाता है)

आज इस ससार को अन्तिम प्रणाम ।
प्रेम के आदर्श, मम, अन्तिम प्रणाम ॥
विश्व के वैभव, तथा अय बन्धु गण !
आज मेवाराम का अन्तिम प्रणाम ॥

(गाता हुआ चला जाता है)

दृश्य ३ अंक ३

स्थान—विवाह मण्डप

स्टेज—पण्डित, तनसुखलाल तथा कुछ अन्य सम्बन्धी।

पण्डित—बोलो ॐ श्री गणेशाय नमः, दक्षिणा चढ़ाओ।

तनसुख०—ॐ श्री········मनछुरी नहीं आया क्या ?

पण्डित—दक्षिणा चढ़ाओ।

तनसुख०—जरूर, वाह, दक्षिणा नहीं चढ़ेगी क्या ? तो मनछुरी का क्या हुआ ?

पण्डित—छुरी का क्या होगा। ओ३म्, दक्षिणा चढ़ाओ।

तनसुख०—ओ३म् दक्षिणा चढ़ाओ।

पण्डित—क्या तमाशा कर रहे हैं सेठजी, यह कोई मन्त्र थोड़े ही है।

तनसुख०—(एक पैसा चढ़ाता है)

पण्डित—वाह यह क्या, ऐसे मोटे देवता के लिये एक पैसा !

तनसुखलाल—आप मन्त्र तो बोलते नहीं हैं दक्षिणा किस बात की ? मन्त्र बोलिये।

पण्डित—पहले देवताओं की स्थापना तो हो जावे। ॐ वरुणाय नमः, ॐ केशवाय नमः, पैसे चढ़ाओ।

तनसुख०—रुपये लेना, घबराते क्यों हो ?

पण्डित—ॐ वासवाय नमः, ॐ अश्विनीकुमाराय नमः, पैसे चढ़ाओ ।

तनसुख०—ज़रूर चढ़ेंगे, सब्र करिये थोड़ा । बिशम्भर, मनछुरी का पता नहीं है, कम्बख्त कहाँ गये । बिशम्भर के पास तो मेरे दस हज़ार रुपये रखे हुए थे । न जाने कम्बख्त कहाँ मरा है । आह, सिर में दर्द ।

एक सम्बन्धी—फिक्र न करे, आही रहें होंगे ।

पण्डित—इति संकल्प साक्षतादिक सहित ब्राह्मणाय दद्यात ।

तनसुखलाल—महाराज यह फ़ारसी तो नहीं समझे । हिन्दी में हो मन्त्र पढ़िये ।

पण्डित—प्रफुल्ल को बुलाओ ॐ नमः ।

तनसुखलाल—महाराज, मैं ही काफ़ी हूँ, उसे क्यों तकलीफ़ देते हो । अगर पहले कह देते तो हम आपको नहीं बुलाते । पण्डित या पुरोहित होने का दम क्यों भरते हो ?

पण्डित—यह तो दक्षिणा पर है महाराज, जैसी शक्कर डालोगे वैसा ही मीठा होगा ।

(एक नौकर का प्रवेश)

नौकर—सरकार गाने वालियाँ आई हैं ।

तनसुखलाल—आने दो ।

(गाने वालियों का प्रवेश)

(नर्तकियों का गाना तथा नृत्य)

पण्डित—भला मन्त्रों में यह मजा कहाँ ?

(नौकर का प्रवेश)

नौकर—सरकार अदालत का चपरासी आया है।

तनसुखलाल—मॅजिस्ट्रेट साहब का मुबारिकबादी का ख़त लेकर आया होगा। (नौकर से) अच्छा आने दो।

(चपरासी का प्रवेश)

चपरासी—यह चिट्ठी है आपके नाम।

तनसुखलाल—(पढ़ता हुआ) हे भगवान्! यह क्या ? (पत्र हाथ से छूट जाता है, कई सम्बन्धी दौड़ते हैं)

पण्डित—क्या बात है ? यह तो अच्छे पड़े हैं, उनका गुरु ......।

तनसुखलाल—हाय, मेरे ऐसे दुश्मन पैदा हो गये। प्रफुल्ल, बेटा प्रफुल्ल। (प्रफुल्ल पिता के पास जाता है)।

प्रफुल्ल—क्या हुआ पिताजी, क्या फिर सिर में दर्द होने लगा।

तनसुख०—हाय मेरी बुढ़ापे में लाज गई। दुनियाँ भला क्या कहेगी! मॅजिस्ट्रेट साहब ने ऐसे समय पर दोस्ती निभाई।

पण्डित—क्या हुआ महाराज, कुछ कहोगे भी ?

तनसुखलाल—तुम्हारा सिर हुआ, न जाने कैसा कुमुहूरत देखा था कि मेरे प्रफुल्ल की शादी रोकदी गई।

सम्बन्धी—हा राम, ऐसा कलियुग।

चपरासी—सरकार, मॅजिस्ट्रेट साहब ने कहलवाया है कि हुकुम उदूली न हो।

तनसुखलाल—अच्छा भाई, अच्छा। जाओ तुम लोग सब जाओ। (सिर पर हाथ रख कर बैठ जाता है)।

प्रफुल्ल—पिताजी यहाँ कब तक बैठेंगे, चलिये अन्दर चलें।

(सब का प्रस्थान)

प्रफुल्ल—(स्वत) अच्छा हुआ जो ब्याह रुक गया, नहीं तो वह भी मेरी ही क्लास में भरती होती।

(प्रस्थान)

सीन ४ अंक ३

स्थान—सेवा-मन्दिर।

स्टेज—एक कुटी। चम्पा कृष्ण की तस्वीर के सम्मुख हाथ जोड़े खड़ी है।

चम्पा—अहा, कितनी ठण्डी है यह कुटी और कितने अच्छे हैं यह पंछी जो मुझे तरह-तरह के गीत सुनाते और समझाते हैं। मेरा विनय भैया सौ बरस जिये, जिसने मुझे यह छोटी सी कुटिया बनवा दी। प्यासे मुसाफ़िरों को पानी पिला कर मैं अपने को कृतार्थ समझती हूँ। उस दौलत में, उन आरायशों में कितनी आग थी, कैसी जलन थी। पर यहाँ, मैं और मेरे मनमोहन आराम से रहते है, दो रूखी सूखी रोटी, जो मैं खाती हूँ, उन्हीं का उन्हें भी भोग लगाती हूँ। अब देखती हूँ, पण्डित और पुजारी, मुझे मनमोहन की पूजा करने से कैसे रोकते हैं। अगर मुझे यों पूजा न करने दी, तो मैं दिल में ही उनकी मूर्ति स्थापित कर लूँगी। धन्य हो मेरे नाथ, तुम तो बड़े कृपालु हो, बड़े दयालु हो। तुम्हारी महिमा किस मुख से गाऊँ, (हाथ जोड़ कर प्रार्थना करती है)।

जग स्वामी, अंतरयामी, घटघट-वासी तुमही तो हो।
करुणामय, जग-प्रतिपालक, औ अविनाशी तुम ही तो हो॥
दीन-बन्धु, पति, सखा, सहृदवर, प्रिय साकार तुम हीं तो हो।
अपरम्पार, विराट, महामय, निराकार तुम ही तो हो॥

(चम्पा ध्यानमग्न होकर श्रीकृष्ण की तस्वीर के सामने स्थिर बैठ जाती है) ।

(सेवाराम का गाते हुए प्रवेश)

सेवाराम--

है, पाते अन्त, यही निश्चय, जीवन सारा है यक सुपना ।
यह सभी पराया है जिसको, हम कहते है अपना अपना !!

यह सभी पराया है, कौन किसका पिता और कौन किसका जाया है । सब धोखा है, माया है, चक्कर है, भ्रम है । विनय जैसे धोखा दे जावें, इतने वर्षों का प्रयत्न एक भी आदर्श व्यक्ति न बना सके, सब चक्कर है, मृग-मरीचिका है ।

(एक ओर को बढ़ता है, परन्तु एक साइनबोर्ड को देख कर ठिठक जाता है)

है, यह आशा की किरण कहाँ से आई ? देखूँ- (पास जाता है) साफ लिखा है, 'सेवा-मन्दिर' । अरे तो क्या प्रेम और सेवा में विश्वास करने वाला कोई और भी व्यक्ति उत्पन्न हो गया ! तब तो मेरा परिश्रम वृथा नहीं गया । परन्तु वह व्यक्ति कौन होगा ? (अन्दर बढ कर) यह तो कोई स्त्री है, जो किसी चित्र के आगे ध्यानमग्न बैठी है, तो क्या सेवा की भी मूर्ति बन जायगी और तैतीस करोड़ देवताओ में एक और बढ़ जाएगा । नहीं, मेरा यह ध्येय कभी नहीं रहा, मैं तो मनुष्यों को सेवा और प्रेम की मूर्ति बनाना चाहता हूँ ।

(चम्पा ध्यान से उठती है)

चम्पा—(सेवाराम को देख कर) कौन हो भाई, अगर थके हुए मुसाफ़िर हो, तो झोंपड़ी में आराम कर सकते हो। अगर भूखे हो, तो जौ की रोटियाँ रखी हैं, ठडा पानी है।

सेवाराम—बाहर लगे हुए बोर्ड को देख कर मैं ठिठक गया था। तुम जैसी देवी के दर्शन कर प्रसन्नता हुई, परन्तु इतनी दूर जङ्गल में भी अन्ध विश्वास को देख शोक भी हुआ। तुम्हारी सहानुभूति के लिये धन्यवाद। कृपया बतलाओगी कि यह किसका चित्र है जिसकी तुम प्रार्थना कर रही थी ?

चम्पा—अगर तुम हिन्दू हो तो पहचान लोगे। इन्हे लोग श्रीकृष्ण कहते है, नॅदलाल कहते हैं, मीरा गिरधरगुपाल कहा करती थी। मैं इन्हे मनमोहन कहती हूँ।

सेवाराम—छिः एक काग़ज के चित्र को तुम इतना महत्त्व दे रही हो। नीचे पढ़ो तुम्हे मालूम होगा कि यह किस छापेखाने में छपी है। मनुष्य कृत भिन्न भिन्न रङ्गो को तो तुम देख ही रही हो।

चम्पा—चित्र, हाँ यह सबके हृदय का चित्र है। जिसे तुम काग़ज कहते हो, उसे मैं जीवित वस्तु मानती हूँ। जिसे तुम चित्र कहते हो, उसे मैं परमात्मा मानती हूँ। अब आइन्दा ऐसा न कहना।

सेवाराम—ओह, इसी परमात्मा के बखेड़े ने तो हमारे देश को पतित बना रखा है। लोग परमात्मा के नाम पर

करोड़ों रुपया लूटते हैं, अकथक अत्याचार करते हैं। मैं तुम्हारा नाम नहीं जानता देवी, परन्तु मुझे यह कहने की आज्ञा दो कि—

क्यों भूलीं इस मोहजाल में, कौन खुदा, परमेश्वर ?
सब मानव हैं, मानव सब हैं, मानव ही है ईश्वर ॥
महाशक्ति है प्रकृति हमारी, वह जननी हम सुत हैं।
यदि कर्त्तव्यों के पालन में, त्रुटि करते तो च्युत हैं ॥
पर झूठे आराधन में, माला में क्या है रक्खा ?
सेवा अंगीकार करो, सेवा ही साधन सच्चा ॥

चम्पा—ठीक कहते हैं आप, पर इतनी दूर की आपको सूझ कैसे गई कि मैं झूठी आराधना करती हूँ। आप सेवा को ही एकमात्र सच्चा साधन बता रहे है, परमात्मा में विश्वास न करना सिखाते है। क्या मै पूछ सकती हूँ कि इन्सान को बुरे कामों से हटाने में कौनसी ताक़त काम करती है ? क्या मै जान सकती हूँ कि मुसीबत में धीरज कैसे मिलता है ? आप आँखें खोलिये, ज़र्रे, जर्रे में उसका नूर झलक रहा है। आप कहते हैं कि यह प्रकृति है, लेकिन प्रकृति ऐसी क्यों है ? यह उसकी इच्छा है, उसकी इच्छा के बिना कुछ भी नही हो सकता।

सेवाराम—थोड़ी देर के लिये यह भी मान लूँ कि प्रकृति को ही तुम परमात्मा कहती हो, तब भी केवल माला फेरने से, तिलक लगाने से क्या लाभ ? यदि तुम्हारा परमात्मा

एक लड़की के सन्दूक़ में बैठ सकता है, या मन्दिर में समा सकता है, तो वह परमात्मा नहीं है। यदि परमात्मा कुछ है, तो वह हमारे उच्च विचार हैं।

चम्पा--बड़ी ख़ुशी की बात है कि तुमने यह तो मन्जूर किया कि परमात्मा भी कोई ताक़त हो सकती है, लेकिन तुमने अभी तक जाना कुछ नहीं। मेरा परमात्मा तो दुनियाँ के जर्रे जर्रे में है, फिर यह तस्वीर और यह झोंपड़ी अलग क्यों होगी?

सेवाराम--हो सकता है, परन्तु यदि ईश्वर में केवल विश्वास किया जावे, तो केवल विश्वास करने से क्या होगा? कार्य्य होना आवश्यक है और कार्य्य ईश्वर नहीं कराता हम करते हैं।

चम्पा--यही तो तुम समझते नहीं। ईश्वर वह महाशक्ति है, जो हमें अच्छे कार्य्य करने को उत्साहित करती है। ईश्वर ही से तो हमें शक्ति मिलती है।

सेवाराम--मिलती होगी। पर हम उस शक्ति को ईश्वर क्यों कहे। यदि कहीं ऐसा हो जावे, तो यह ईश्वर के नाम पर होने वाले झगड़े सदा के लिये शान्त हो जावें।

चम्पा--ऐसा नहीं होगा। ईश्वर एक है, परन्तु भिन्न भिन्न धर्मों में उसके अलग अलग नाम हैं। लड़ाई ईश्वर पर नहीं होती, उसके आराधन करने के ढङ्ग पर होती है।

अन्यथा केवल मेरा मोहन ही एक ईश्वर है। सब मोहन-मय है।

सेवाराम—जब केवल एक ईश्वर है, तो यह मोहन क्या बला है, यह मोहन तुम्हारा कहाँ बसता है?

चम्पा—मेरा मोहन कहाँ रहता है—

यहाँ रहता मेरा मोहन, वहाँ रहता मेरा मोहन।
जगह ऐसी नहीं कोई, जहाँ रहता नहीं मोहन॥
जो हम खाते हैं वह खाता, जो हम पीते हैं वह पीता।
हमारे सभी कार्यों का है, निर्माता वही मोहन॥
अरे इस मोहनी दुनियाँ में, सब के सब हैं हम मोहन।
कहो फिर प्रकृति क्या वस्तु है, जब हम सब हैं प्रिय मोहन?

सेवाराम—यदि तुम्हारा मोहन हर जगह व्याप्त है, तो फिर विशेष स्थान की क्या आवश्यकता? जब सब कुछ मोहन है, तो चित्र क्यो चाहिए, मूर्ति क्यों पूजती हो?

चम्पा—भोजन रसोई में ही बनता है, स्नान-गृह में नहीं! बच्चा पहले किसी वस्तु के सहारे खड़ा होना सीखता है, उसके बाद वह अपने पैरो पर खड़ा होता है। इसलिए ईश्वर को मुझ जैसी पापात्माये रूप विशेष में ही पूजती हैं। अब कुछ चाहिये तो मैं सेवा करूँ, नहीं तो मुझे कुछ प्रार्थना करने दीजिये। समय हो चला।

सेवाराम—(स्वतः) इस अनपढ़ स्त्री ने तो मेरी जबान बन्द करदी। मुझ में कितनी कमी है ?

(तारा का प्रवेश)

तारा—कहो बहन, यह कुटी तुम्हे भाई तो सही !

चम्पा—कुछ न पूछो। मुझे तो मालूम होता है, मानो मुझे स्वर्ग ही मिल गया। मेरा विनय भैया तो अच्छा है।

तारा—हाँ, जब से दिल्ली से लौटे है, तब से तो कुछ ठीक है, प्रफुल्ल का विवाह रुकवाने दिल्ली गये थे।

सेवाराम—कौन ? कौनसा विनय, मेरा मित्र विनयकुमार तो नही ?

तारा—आपका नाम सेवाराम तो नही है ?

सेवाराम—हाँ, मैं ही हूँ। कैसा पागल हो गया था। परन्तु विनय वहाँ पहुँचा कब ? मै भी तो वहाँ था, उस दिन तो वह वहाँ नहीं था।

तारा—वे वायुयान से वहाँ पहुँचे थे। जिस समय पहुँचे, उनका ही नाम पुकारा जा रहा था, आप कदाचित् पहले ही चले गये थे।

सेवाराम—मेरा सन्देह वृथा था। इसे ही भ्रम कहते है। (चम्पा को संकेत करके) इस देवी ने नेत्र खोल दिये, धन्य हो तेरी लीला, परमात्मा !

चम्पा—मुझे माफ़ करना श्रय महात्मा। मालूम नहीं था कि मैं महात्मा सेवाराम से बातें कर रही थी, अगर मालूम होता, तो मैं इतनी वेतकल्लुफ़ी से बातें न करती।

सेवाराम—कोई चिन्ता नहीं। मैं तो समझता हूँ कि आज तुमने लक्ष्य-पथ का मार्ग खोल दिया। इसी सहारे को तो मैं अँधेरे में टटोलता फिरता था, आज तुमने प्रत्यक्ष दिखा दिया। परमात्मा अब मेरी वाणी में ऐसा ओज देगा, मेरे शरीर को इतना शक्तिशाली बनावेगा कि मैं कुछ ही दिनों में मनुष्यों को मनुष्य जाति के कल्याण के लिये जुटा दूँगा।

(एक कोढ़ी का प्रवेश)

कोढ़ी—एक पैसा, माई।

सेवाराम—पैसे का क्या करेगा? (चम्पा से) इसे रोटियाँ देदो, कुछ रखी हों तो।

चम्पा—ठहरो। (कोढ़ी से) बैठ जा, मैं तेरे ज़ख्मों पर दवा लगा दूँगी। अगर चाहे तो यहीं ठहर जा, जो कुछ होगा, सेवा करूँगी।

कोढ़ी—मैं महापापी हूँ। आह तुम सेवा करोगी?

चम्पा—तुम कुछ भी क्यों न हो, मेरे लिये तो ईश्वर के एक रूप हो, मोहन हो!

कोढ़ी—धन्य हो देवी! तुमने मुझे बीते हुए दिनों की याद दिला दी। एक पवित्र बालिका थी, मानो स्वर्ग से उतरी हो। उसके पिता ने उसका एक वृद्ध से विवाह कर दिया ··।

चम्पा--होगा, तुम यह क़िस्सा मुझे क्यों सुनाना चाहते हो?

कोढ़ी—दुनियाँ मुझे घृणा से देखती है। आदमी मेरी बात सुनना तो दूर रहा, मेरी ओर देखना भी नही चाहते, इसलिये, तुम्हें ही यह दर्द-भरी कहानी सुनाऊँगा। हाँ, तो वह पवित्र बालिका बेवा होने के बाद, जैसी कि आशा की जाती थी, ईश्वर-भक्ति में लीन हो गई। परन्तु मुझ पापी ने उसे झूठा उपदेश देना शुरू किया। मैंने उससे कहा कि ईश्वर सब जगह है, इस लिये हम में तुम में भी है। जब हम, तुम ईश्वर है तो फिर भेद कैसा? समझी ना, (रोता है) हाय उस स्वर्ग के फूल को ... ।

चम्पा--त्रिविक्रमपरशाद!

कोढ़ी—(ध्यान से देखकर) ललिता, तुमही ललिता हो। इतनी दयालु और कौन हो सकती है। माफ़ करना देवी, मुझे माफ करना, मुझ पापी को माफ़ करना। अपने किये की काफ़ी सज़ा भुगत ली। छत पर से कूद कर भागा सो गिर पड़ा, ज़ख्मी हुआ, रोग बिगड़ कर कोढ़ हो गया। माफ़ करना देवी! मैं तुम्हारा अपराधी हूँ। (चम्पा के पैर पकड़ना चाहता है)।

चम्पा—(पीछे हट कर) बस करो। मैंने तो तुम्हें कभी का क्षमा कर दिया था। तुम कुछ भी क्यो न हो, तुम में कही मेरा मोहन ज़रूर छिपा है। पर त्रिविक्रमपरशाद, तुमने अपने पापो का प्रायश्चित्त नही किया है। मेरे पास एक साधू

की दी हुई दवा है, उससे शायद तुम महीने भर में अच्छे हो जाओगे, परन्तु तुम्हें प्रतिज्ञा करनी होगी कि अच्छे होते ही तुम अपने को पुलिस के सुपुर्द कर दोगे।

कोढ़ी—(त्रिविक्रम।) जैसा कहोगी देवी, वही होगा। मैं तो महापापी हूँ। दिल को चैन नहीं पड़ता, मैं आज कह दूँ कि तुम्हारा वृद्ध पति कुदरती मौत नहीं मरा, वरन् मुझ पापी ने उसे गला घोट कर मार डाला।

चम्पा—हाय मोहन! (रोती है)।

कोढ़ी—पर मुझे इतना बड़ा पापी न समझो। तुम्हारे पति वैसे भी अधिक दिन जीवित नहीं रह सकते थे······।

चम्पा—बस करो, मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया। अब एक ओर जाकर कुटी में विश्राम करो। (कोढ़ी का प्रस्थान)

सेवाराम—तुम महात्मा हो देवी, मैं नहीं। ऐसा उच्च आदर्श कहीं मेरा होता। ललिता बहन, मैं बचपन में भी तुम्हें पूजनीय दृष्टि से देखता था, अब भी देखता हूँ। मैं सब कुछ छोड़ कर तुम्हारे चरणों के निकट बैठ कर, ज्ञान की बातें सीखा करूँगा।

चम्पा—फिजूल शर्मिन्दा न करो सेवाराम, मैं तो बस मोहन को ही जानती हूँ और मोहन को ही मानती हूँ।

सेवाराम—साकार आराधन की सफल साकार मूर्ति तुम्हें प्रणाम है।

तारा—और भी सुना बहन! आपके लाड़ले भाई ने एक सभा बनाई है, जो समाज की कुरीतियों को दूर करेगी, विशेषतः बाल-विवाह और अनमेल विवाहों को रोकेगी।

सेवाराम—धन्य हो, अय, सब के परमात्मा। जो कार्य्य मेरे प्रयत्न से भी नहीं हो रहा था, वह अपने आप हो रहा है।

तारा—वे तो सेवाराम जी को जगह जगह ढूँढ़ चुके है, इन्हे मालूम नहीं है कि इनके विना देश में कैसा कोहराम मचा हुआ है। परसो उस सभा का बृहद् अधिवेशन होगा, आप सब भी आवे।

चम्पा—यह बहुत अच्छी बात है वहन। मुझ जैसी, बालविवाह और अनमेल विवाहो से पीड़ित लाखो आत्माये दुआ देगी। मेरे मोहन ने आज लोगों के दिलो में सुधार की भावना पैदा करदी है। (सेवाराम से) महात्मा सेवाराम ! मेरी प्रार्थना का समय हो चला, आप मुझे आज्ञा दे।

सेवाराम—हम भी तुम्हारे साथ है। आज जीवन में प्रथम बार मैंने ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास किया है। मुझे अपने में एक अभूतपूर्व शक्ति के प्रादुर्भाव का आभास प्रतीत हो रहा है।

तारा—करो, वहन, प्रार्थना करो, हम साथ देंगे।

(सब गाते है)

भला सब का करेगा वह, जिसे रघुवीर कहते हैं।
भला सब का करेगा वह, जिसे बलवीर कहते हैं॥

जिसे प्रणवीर कहते हैं, जिसे रणवीर कहते हैं।
जिसे कुछ राम कहते हैं, जिसे रहमान कहते हैं॥
जिसे भगवान कहते हैं, जिसे कुछ श्याम कहते हैं।
भला सब का करेगा वह, जिसे घनश्याम कहते हैं।
कोई कुछ उसको कहते हैं, कोई कुछ उसको कहते हैं॥
भला सब का करेगा वह, जिसे कुछ न कुछ कहते हैं॥

(पट परिवर्तन)

दृश्य ५ अंक ३

स्थान—फ़क़ीरचन्द का घर

फ़कीरचन्द—अफसोस न करो श्रीदेवी । जो कुछ होना था सो हो गया ।

श्री देवी—क्या ख़ाक हो गया । मेरे हज़ारो रुपयो पर पानी फिर गया । नौ मन तो केवल चावल ही आये थे । मनों मिठाई आधे और चौथाई दामों में देनी पडी । ब्याह रुकवाने वालों को परमात्मा देखे ।

फ़क़ीरचन्द—एक तरह से अच्छा भी हुआ, हमारी प्रेम तो हमारे यहाँ रह जावेगी ।

श्रीदेवी—वैसे भी कही जा नही रही थी । भला सोचो तो कितनी बदनामी हुई है । हम ने कितने ज़ोरों की तैयारी की थी, सारी बिरादरी को दावत दी थी । अब वे सब भला क्या कहेंगे ?

फ़क़ीर०–'बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेय ।' अब तो यह देखो कि इसमें नुक़सान हुआ या फ़ायदा । सरकार ने कुछ सोच समझ कर यह क़ानून बनने दिया है । छोटी उम्र में शादी करने से बहुत से ख़तरे रहते है । हमारे शास्त्रो ने भी एक अवस्था नियत करदी है, मै तो समझता हूँ कि अभी चाहे यह अच्छा न लग रहा हो, परन्तु इसका परिणाम अच्छा ही होगा ।

श्रीदेवी—मैं तो अनपढ़ हूँ, कुछ समझती नहीं हूँ। अगर आप इसे ठीक समझते हैं तो ठीक है।

(प्रेमलता का प्रवेश)

प्रेमलता—माता जी, मैं पहले नम्बर पास हुई हूँ।

फ़क़ीर०—शाबाश, तुम्हें इसके लिये इनाम दिया जाएगा। बोलो क्या चाहती हो ?

प्रेमलता—मैं तो वही प्रदर्शिनी वाला हवाई जहाज़ लूँगी। पहिले उसे उड़ाऊँगी, फिर सचमुच का मँगवाऊँगी।

फ़क़ीर०—अच्छा, कल चलना।

प्रेमलता—जाती हूँ, यह ख़बर सरस्वती को सुनाती हूँ।

(प्रेमलता का प्रस्थान)

फ़क़ीर०—देखा, हमारी पुत्री कितनी सुन्दर और सरल है। ऐसी सुकुमार बालिका पर विवाह का बोझ डालना अन्याय होता।

श्रीदेवी—अब तो यहाँ तबियत नहीं लगती। चलो कहीं चले चलें।

फ़क़ीर०—प्रेम बम्बई जाने के लिये बहुत दिनों से कह रही थी, वहीं चलेंगे।

(नौकरानी का प्रवेश)

नौकरानी—खाना तैयार है।

फ़क़ीर०—अच्छा आते हैं। (प्रस्थान)

(पर्दा उठता है)

दृश्य ६ अंक ३

स्थान—जेलखाना ।

स्टेजः—[लोहे के सींखचों में बन्द मनछुरी, चञ्चला और बिशम्भर दिखाई देते है । बाहर एक सन्तरी गश्त लगा रहा है । तीनों के सामने एक चक्की रखी है] ।

मनछुरी०—आज हमारी यह हालत । जिसके सामने लोग कॉपते थे, उसकी यह हालत ! इस कम्बख्त बिशम्भर ने पकड़वाया । न रुपये के लालच में पड़ता और न पकड़े जाते ।

बिशम्भर०—चुप बदमाश ! तूने ही तो मुझे नौकरी से छुड़ाया, जूआ खेलना सिखाया और मक्कारी का व्यवसाय बताया । हाय, कभी मैं तनसुखलाल जैसे लखपतियों का दोस्त था, आज जेल में चक्की पीस रहा हूँ ।

चञ्चला—मैं एक बड़े घर की बहू थी । जेवरों की चाट ने, मनछुरी के जाल में फँसाया, हाय अब मैं कहीं की न रही ।

मनछुरी०—सब मुझे ही कुसूरवार ठहराते हो । जिन दिनों मोटर की सैर करते फिरते थे, सिनेमा में जाकर बॉक्स पर बैठते थे । तब मैं बुरा न था । आज जब क़िस्मत के चक्कर ने जेल में ला पटका, तब तुम भी बुरा कहने लगे ।

सिपाही—चुप बदमाश ! चक्की पीसते नानी मरती है, पीसो चक्की ।

सिपाही—(हन्टर उठा कर)

चुप चुड़ैल क्यों बक बक करती,

क्यों न चलाती चक्की?

चञ्चला—हाय हाथ अब टूट गये,

चलती न, चलाती चक्की।

सिपाही—अच्छी पार्टी आई है। लोगों ने पैसे डालकर भी ऐसा तमाशा नही देखा होगा। गाओ, यारो गाओ।

बिशम्भर०—तुझे गाना सूझ रहा है, यहाँ जान पर आ बनी है। थोड़ी देर के लिये चक्की से ही छुट्टी दिला।

सिपाही—अच्छा। लेकिन कोई अच्छी चीज़ सुनाना, नहीं तो... ।

(हन्टर दिखलाता है)।

(मनछुरी और बिशम्भर गाते है)

मुसीबत में कभी तू भी हमें अब याद आता है,

अरे बीते ज़माने ऐश के, तू याद आता है।

कभी हम फख़्र से सीना फुला कर बात करते थे,

ये अदना कान्स्टेब्ल आज, आंखे यों दिखाता है।

जो चढ़ कर बहुत बोलेगा, गिरे ना, ग़ैर मुमकिन है,

सदी इस बीसवी में यह, ज़माना ही सिखाता है॥

[यवनिका पतन]

सीन ७ अंक ३

स्थान—अज्ञात।

स्टेज--[नट, नटी, बालक तथा बालिका]

नट--ओह! कैसा भयंकर खेल दिखलाया प्रिये तुमने! चक्की का गीत अभी तक कानों में गूँज रहा है। तुमने उन्नति के सुन्दर प्रभात का जिक्र किया था, सो क्या वह स्वप्न ही रह जाएगा?

नटी—नहीं प्राणनाथ! अभी खेल की समाप्ति नहीं हुई है। यह जीवन भी एक खेल है, संसार भी एक खेल है। राजे और देश तो उस बड़े खिलाड़ी की शतरंज के मोहरे हैं, न जाने कब और किसका सफाया हो जाए। यही हाल हमारे जीवन का है। न जाने किस समय हमारे हृदय में क्या भाव प्रकट हो जाएँ।

नट—कुछ नहीं, कुछ नहीं, चक्की पिसवा कर खेल खतम कर दिया।

नटी--नहीं प्राणेश! जितना पतन होना था, हो लिया अब तो—

"उन्नति का परिचायक होगा,
कल का सुन्दर प्रातःकाल";

मनछुरी०—अच्छा दादा ! तू भी कह ले, नहीं तो एक दिन वह था कि तुझ सरीखे अदब से झुक कर सलाम करते थे ।

सिपाही—बके मत पाजी, तेरे रङ्ग मैं भी जानता हूँ, यहाँ पतलून की ऐंठ नहीं चलेगी । तुझ जैसे जन्टरमैनों को बहुत सों को चक्की पिसवा चुका हूँ ।

(मनछुरी और विशम्भर चक्की चलाते और गाते जाते हैं)

मनछुरी०
विशम्भर०

चलरी चक्की, चलरी चक्की ।
चलरी चक्की, चल, चल, चल ॥
तू भी झक्की, हम भी झक्की ।
हम–तू झक्की, चल, चल, चल ॥

सिपाही—शाबाश ! चक्की भी पीसो और गाते भी जाओ । बहुत दिनों से सुसरा थेटर भी देखने को नहीं मिला था, आज मिला है बढ़िया तो ।

मनछुरी०—हाँ दोस्त, यहाँ हमारी उम्मीदें क़िस्मत के दोनो पाटो के बीच में पिसी जा रही हैं और तुम्हे थियेटर का मज़ा आ रहा है ।

विशम्भर०—एक पापी सबको ले डूबता है ।

मनछुरी०—कौओ के कोसे भी कभी कभी मर जाते हैं ।

चञ्चला—गाओ, कम्बख्तो, पीसो चक्की ।

मनछुरी—जो हुकम, शैतान की बच्ची ।

विशम्भर०—गाओ, यार, मेरे अच्छे बुरे के साथी—तबियत ही बहलेगी ।

(दोनो गाते है)

हाय हमारा लूटा रुपया, सभी रहा है आज फिसल ।
इन हाथो मे छाले पडते, और पसीना रहा निकल ।
इन दानों के साथ पिस रहीं, जीवन की सब आश विमल ।
चलरी चक्की, चलरी चक्की, चलरी चक्की, चल, चल, चल ॥

(सिपाही झूम झूम कर सुनता है) ।

मनछुरी०-आज मनछुरी ने खोदी है,
मन की पैनी छुरी सकल ।

विशम्भर०—और विशम्भर ने छोड़े हैं,
आडम्बर के साज सकल ।

सिपाही—यार तू गाता तो अच्छा है । देखने में भी होशियार जचता है, भला पुलिस के पँजे मं कैसे आगया ?

मनछुरी०—सारी बुद्धि बिगड़ गई थी,
छींक गई थी, मानो मक्खी ।

विशम्भर०—मत रुक चल चल प्यारी चक्की,
हम भी झक्की, तू भी झक्की ।

चञ्चला—मर मूए, तूने अपनी करनी की भरनी चक्खी,
मुझे उडा लाया काशी से, घर में अपने रक्खी ।

नट—होगा, परन्तु यह कहो कि ऐसे खेल देखने से और खेलने से क्या लाभ ?

नटी--आप लाभ पूछते है प्राणेश ! आज हमारे समाज की दशा बहुत पतित हो गई है। बाल विवाह धड़ल्ले से हो रहे है, अब कहने का समय गया, अब कर दिखाने का समय है। लोग ऐसे नाटकों को देख कर अपने पतन का सच्चा अनुमान कर सकेंगे और सम्भवतः ऐसी कुरीतियो को छोड़ने का, छुड़ाने का भी प्रयत्न करे।

बालक--परन्तु माताजी, सेवाराम अब क्या करेंगे ?

नटी--सब्र करो पुत्र, अभी सब देख लोगे।

बालिका—माता जी, मेरा भी विवाह कम उम्र में मत करना।

नटी--अच्छा पुत्री।

नट—यदि इसी तरह से हमारे युवकों की प्रकृति बदलती रही, तो निश्चय ही अब अच्छा समय आरहा है।

नटी--हाँ, मैं भी यही समझती हूँ। आओ, आज हम उसी प्रार्थना को दुबारा पढ़े ।

(सब गाते है)

प्रार्थना ।

सुन्दर प्रभात आया, जग मुदित मन से धाया,
वन्दन करे तुम्हारा श्रीकृष्ण, नंदनंदन ।
तुम दीन के सहायक, शुभ कार्य्य में विनायक,
हो अग्रसर सदा तुम, खल, दुष्ट, दल विभञ्जन ।
हम में सुबुद्धि भरदो, सब कार्य्य पूर्ण करदो,
तुम विश्व के रचयिता, निर्लेप, नित, निरञ्जन ।

(यवनिका उठती है)

सीन ८ अंक ३

स्थान—समाज-सुधार-सभा-भवन ।

प्रफुल्ल--कितना अच्छा मकान बनाया गया है यह। यहाँ, लोग, तरह २ के सुधार करने का आयोजन करते हैं। मुझे तो यह जगह अपने दिल्ली वाले विशाल भवन से भी अच्छी मालूम होती है। ऐसे ही यहाँ के रहने वाले हैं, सेवाराम भाई को ही देखो कि, कितने सादा और अच्छे विचार वाले हैं। हे ईश्वर! मुझे भी तू ऐसा ही बनाना। यहाँ कोई मूर्ति नहीं है, लेकिन जगह की पवित्रता ऐसी है कि खामखाह ही प्रार्थना करने को जी चाहता है। आज वही सेवाराम भाई की बतलाई प्रार्थना गाऊँ। (चारो ओर देखता है) कोई भी तो है नहीं, उच्च स्वर से उस प्रार्थना को गाऊँ।

(गाता है)

प्रार्थना ।

आज इस लघु शेष जीवन का पुनीत प्रभात है।

(प्रेमलता का प्रवेश, चुपचाप प्रफुल्ल के पीछे आकर खड़ी हो जाती है और साथ साथ गाती है)

किस अपरिचित मार्ग में यह बढ़ रहा दिन रात है?

बाँध कर संयम व सारे............।

(चौंकता है) है यह कौन गा रहा है? (पीछे मुड़ कर देखता है) तुम गा रही हो, गाओ, तुम भी गाओ।

प्रेमलता--मैं तुम जैसा थर्डक्लास नहीं गाती हूँ ।

प्रफुल्ल—तुम बहुत अच्छा गाती होगी, इसमें कोई शक नहीं, क्यों कि अक़लमन्द आदमी अपने मुँह से अपनी तारीफ़ नहीं करते ।

प्रेमलता--जी हाँ । तुम समझदार लड़के मालूम होते हो, अगर कानपुर होता तो मैं बतलाती कि कौन अच्छा गाने वाला है ।

प्रफुल्ल—लड़कियाँ ज़बान की बड़ी तेज़ होती हैं, कौन जाने वह प्रेमलता भी ऐसी ही निकलती।

प्रेमलता—कौन प्रेमलता, मेरा भी नाम प्रेमलता है ।

प्रफुल्ल—मेरा उससे ब्याह हो रहा था । सेवाराम भाई ने रुकवा दिया । फ़क़ीरचन्द की लड़की है कानपुर वाले फ़क़ीरचन्द की ।

प्रेमलता--वह तो मैं ही हूँ, तो क्या तुम्हारा नाम ही प्रफुल्ल है । तुम तो बहुत अच्छे लड़के हो। गाते भी अच्छा हो, वह तो मैं मज़ाक़ कर रही थी । हम, तुम मित्रों की भाँति रह सकते हैं, पिता जी तो ब्याह की बात चला रहे थे ·· ।

प्रफुल्ल--वह तो मैं भी पसन्द नहीं करता। सोचो तो प्रेमलता······ ।

प्रेमलता--क्या सोचो। मैं तो अपनी माता जी को जानती हूँ। ब्याह के बाद मैं भी वैसी ही हो जाती । उन्हीं जैसी कुछ न जानने वाली। और देशों की लड़कियों को देखो,

कैसे २ काम करती है। एमी मॉलिसन ने विवाह के पहिले हवाई उडान के कैसे सुन्दर रिकार्ड जीने। मेरी भी इच्छा है कि मैं भी पहले ऐसे ही काम करूँ।

प्रफुल्ल—ठीक है प्रेमलता, मैं भी एक आविष्कारक बनना चाहता हूँ. लेकिन ब्याह की बात अभी मैं पसन्द नहीं करता। ऐसे आजाद रहते हुए हम बन्धन में क्यो पड़ें।

(चम्पा का प्रवेश, चम्पा दोनों को प्रेम भरी दृष्टि से देखती हुई उनके पीछे खडी हो जाती है)

प्रफुल्ल—आओ, वह प्रार्थना ही पूरी करलें।

(दोनो गाते हैं, पीछे खडी चम्पा भी गाती है)

"आज इस लघु शेष जीवन का पुनीत प्रभात है"

प्रेमलता—(चौक कर) है, और कौन गा रहा है ? (मुड कर पीछे देखती है) तुम कौन ?

चम्पा—मै, मैं भी एक प्रार्थना करने वाली हूँ। गाओ बच्चो गाओ। आह, तुम अधखिले फूल हो, कितने सुन्दर हो मेरे बच्चो, मेरे मोहन।

प्रेमलता—(प्रफुल्ल से) यह कुछ पागल तो नही है ?

प्रफुल्ल—नहीं।

(तारा का प्रवेश)

तारा—ओ हो, बहिन चम्पा तो यहाँ है। कहो, अपनी कुटी से तो फुर्सत मिल गई ?

चम्पा—हाँ मेरी कैसी खुशकिस्मती है कि मै इन दो प्रेम-मूर्तियो के दर्शनो को चली आई। देखो बहन, कैसी पवित्र आत्माये है ये।

तारा—अरे यह तो प्रफुल्ल है।

प्रफुल्ल- नमस्ते भाभी, मैं तो तुम्हे इस केसरिया साड़ी में पहचान भी न सका।

चम्पा—मेरा भतीजा प्रफुल्ल है और यह कौन है।

तारा—प्रेमलता, फ़कीरचन्द को पुत्री, ······वे भी आ ही रहे है।

(फकीरचन्द और श्रीदेवी का प्रवेश)

प्रेमलता—आप भी आगई माताजी, अहा. पिताजी भी आए है।

फ़क़ीरचन्द—प्रेमलता तू तो यहाँ पहिले से ही मौजूद है ?

प्रेमलता—जी हाँ, पिताजी, देखिये, कितना ठण्डा और सुन्दर स्थान है यह।

तारा—वही प्रार्थना इन सब को भी सुना दो।

(सब गाते हैं)

"आज इस लघु शेष जीवन का पुनीत प्रभात है"

(तनसुखलाल, विनयकुमार और भरोसेलाल का प्रवेश)

विनयकुमार—वाह, क्या मंगलगान सुनाई दे रहे है। सचमुच आज हमारे अन्धकारमय जीवन का पवित्र प्रभात है। यह जाग्रति का छोटा सा दीपक किसी दिन सारे ससार को आलोकित कर देगा।

तनसुखलाल—आज मेरी आँखे खुली । अगर प्रफुल्ल का विवाह कर देता तो आज प्रफुल्ल न दिखाई देता वरन् एक मुरझाया सा फूल दिखाई देता । विनय, मेरे कटु व्यवहार के लिए क्षमा करना । तुम सा पुत्र पाकर मैं अपने को भाग्यशाली समझता हूँ ।

विनय०—इसका श्रेय सेवाराम को है ।

तनसुखलाल—कौन सेवाराम ?

विनय०—महात्मा सेवाराम, (सेवाराम का प्रवेश) वे स्वयं ही आगये ।

सेवाराम—अहो भाग्य है कि आज मैं एक साथ प्रायः सभी आत्मीयों को देख रहा हूँ । देवी चम्पा भी है, तारा भी है, विनय भी है और यह शायद प्रफुल्ल है ।

विनय०—तुम्हें ही याद कर रहे थे, महात्मा । (परिचय कराते हुए) यह मेरे पिताजी है, ये प्रेमलता है, यह इसके माता-पिता है ।

सेवाराम—मिल कर हार्दिक प्रसन्नता हुई ।

सब—हम आपके दर्शन करके अपने को कृतार्थ समझते है ।

सेवाराम—आपकी कृपा है ।

चम्पा—आओ मेरे बच्चो, वही प्रार्थना गाओ, देखो महात्मा सेवाराम भी आज अपन में खड़े है ।

(प्रेमलतो, प्रफुल्ल गाते हैं, सब दोहराते है)

आज इस लघु शेष जीवन, का पुनीत प्रभात है।
किस अपरिचित मार्ग में यह, बढ़ रहा दिनरात है ?
बाँध कर संयम व सारे, सद्गुणों के पाश में।
लगा कर उन्नति के पर, मै, उड़ चलूँ आकाश में॥
शक्ति दो भगवन् मुझे, हे ! झेलने की विघ्न सब।
देश, धर्म, समाज का, कुछ हो सके उपकार तब॥

सेवाराम—शाबाश, तुम अवश्य देश का कुछ उपकार करोगे। (चम्पा से) देवी चम्पा, अच्छी तो हो, कुटी में तबियत तो लग गई ?

तनसुखलाल—यह कौन ?

विनय०—यह······।

चम्पा—अभागी ललिता, आपकी पुत्री।

तनसुखलाल—हाय, मुझे पहले ही यह सन्देह हुआ था। हा राम, (मूर्छित होकर गिरता है) चम्पा दौड़ कर पानी लाती है और मुख पर छींटे देती है।

तनसुखलाल—(होश में आते हुए) बस, सब कुछ हो चुका। अब मै इस वेश में अधिक न रह सकूँगा। बेटी ललिता मुझे अपने चरणों के समीप अपनी कुटी में जगह

देना। महात्मा सेवाराम, मैं अपनी सारी सम्पत्ति समाज-सुधारक-सभा को देता हूँ।

फ़कीरचन्द—मैं भी अपनी आधी सम्पत्ति इस सभा को दान करता हूँ।

सेवाराम—धन्य है, आपकी दानशीलता ! आपने अपने जन्म भर के पाप धो लिये। आप लोगो का और अन्य धनकुवेरो का यही सच्चा प्रायश्चित है कि वे अपना धन परोपकार में लगा दे। आपके रुपये से यह सभा आश्चर्य्यजनक कार्य्य कर दिखायगी। यदि, ईश्वर को यही स्वीकार है कि भारत एक बार फिर पनपे तो निस्सन्देह हम बाल-विवाह आदि कुरीतियो को समूल उखाड़ फेंकेगे।

चम्पा—मैं तो आज्ञा लूँ। जाकर प्रार्थना करूँगी।

विनय--ऐसी क्या जल्दी है बहन ?

सेवाराम—नहीं, देवी का कोई नियम टल नहीं सकता। आज तुम अपनी पवित्र वाणी से कुछ बोल कर हम उपस्थित व्यक्तियो के मन का मैल धो दो।

चम्पा—मुझ वेश्या को ....।

सेवाराम--तुम देवी हो।

(बन्ने मोला का प्रवेश)

बन्ने--अहा बाईजी तो यही है, पूरी पुजारिन बन गईं। हमने तो आख़िर ढूँढ ही लिया।

समाज की पुकार।

विनय--अच्छा बको मत, अब प्रार्थना होगी।

(सब गाते हैं)

प्रार्थना।

तुमको लाखों प्रणाम, तुमको लाखों प्रणाम !
मेरे नटनागर, मनमोहन, तुमको लाखों प्रणाम।
श्री बनवारी, जगमोहन, तुमको लाखों प्रणाम॥
मौला-(मेरे मौला, कमली वाले, तुमको लाखों सलाम !)
तुमको लाखों सलाम, तुमको लाखों प्रणाम।
जग पालक, घट घट वासी, तुमको लाखों प्रणाम॥

(यवनिका पतन)

※ समाप्त ※
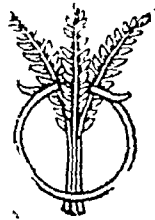
शुद्धि-पत्र।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध शब्द	शुद्ध शब्द
१०	८	नटी-सखी	नटी, सखी
१७	१२	निरंजन	निरञ्जन
२०	७	हा	हो
३०	८	...वड़े	घड़े वड़े
३८	१२	विमला	तारा
७२	२१	हँसतो	हँसता
७५	२१	आतथ्य स्वाकार	आतिथ्य स्वीकार
७६	१०	भकता	झुकता
८४	१२	विल	भिल
९७	२	फ़ल	फ़ेल
९८	११	दवाये	दवायें
१०४	२	सद्ध	सिद्ध
१३९	१	लड़की	लकड़ी
१४९	१६	बैठते थे। तब	बैठते थे, तब
१५८	८	हा	हो